तृतीय अध्याय

हबीब तनवीर के नाटकों की विवेचना

नाटक की कसौटी रंगमंच को माना गया है और ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। भरतमुनि ने भी अपने नाट्यशास्त्र में नाटक की आत्मा रंगमंचीयता को माना है। रंगमंच एक ऐसी प्रदर्शनकारी कला है जो केवल मनोरंजन ही नहीं करती अपितु जीवन के विविध अनुभवों को रूपायित भी करती है। यह एक जीवंत कला है। प्रसिद्ध नाटककार दयाप्रकाश सिन्हा लिखते हैं, *"रंगमंच एक विशिष्ट कलात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम है। वह सीमित अर्थों में किसी वर्ग-विशेष का नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज का, अपनी विविधताओं सहित प्रतिनिधित्व करता है। इस अर्थ में वह सम्पूर्ण विश्व है।"* [1] नाटक और रंगमंच के बेहतरीन तालमेल को अगर हम देखना चाहें तो हबीब तनवीर का काम इसकी मिशाल है। विचारधारा से हबीब तनवीर वामपंथी थे, जिसकी नींव इप्टा से पड़ी। यहीं से उन्होंने सामूहिकता में नाटक-निर्माण करना, लोक-शैली का उपयोग करना, राजनीतिक यथार्थ की अभिव्यक्ति करना और अपने रंगकर्म को व्यापक समाज से जोड़ना सीखा। अपने नाटकों में लोक और शहरी रंगशैलियों के तालमेल से जीवन की व्याख्या करना उनका उद्देश्य रहा है।

हबीब तनवीर के नाट्य-लेखन के संदर्भ में विद्वानों के कई मत हैं। कमला प्रसाद हबीब तनवीर को भारतेंदु हरिश्चन्द्र के उत्तराधिकारी मानते हैं। वह लिखते हैं, *"आजाद भारत में भारतेंदु के सच्चे उत्तराधिकारी बने, हबीब तनवीर। कोई पाठक 'अंधेर-नगरी' के बाद 'आगरा बाजार' का पाठ करे तो उसे अनुभव होगा कि जैसे एक शताब्दी की सरिता के ऊपर कोई पुल बन गया है। भारतेंदु की आत्मा विकास कर्म में जैसे हबीब तनवीर की चेतना में उतरी हो। देश काल का रंग*

[1] सिंह, डॉ. केदारनाथ; हिंदी के प्रतीक नाटक और रंगमंच; विद्या विहार, गांधी नगर, कानपुर; संस्करण 1985; पृ. 47

और अंदाज अलग-अलग पर दोनों में लोक का अनलंकृत स्वभाव।"[2] प्रयाग शुक्ल को हबीब तनवीर के लेखन में 'ब्रेख्त का प्रभाव' दिखाई देता है। वे लिखते हैं, *"हबीब तनवीर को नाटकों के लेखन में ब्रेख्त से बहुत मदद मिली। उन्होंने ब्रेख्त के नाटक द गुड वुमेन ऑफ सेतजुआन को छत्तीसगढ़ी में प्रस्तुत किया।"*[3] वहीं अशोक वाजपेयी हबीब तनवीर के नाटक को 'उत्तर आधुनिक मानते हैं'।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में हबीब तनवीर के कई रूप हमारे सामने हैं। वे नाटककार, निर्देशक, अभिनेता, शायर, नाट्य-चिन्तक सब एक साथ हैं। *"वह ऐसे विरल प्रगतिशील बुद्धिजीवी रंगकर्मी थे, जिसने अपनी एकात्म-निष्ठा से रंगमंच को व्यवस्था के प्रतिरोध एवं विरोध का सशक्त जन-माध्यम बनाया। संघर्षशीलता और रचनात्मक प्रयोगधर्मिता उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व की प्राणशक्ति थी।"*[4] बावजूद इसके एक नाटककार के रूप में नाटक के इतिहास के ग्रंथों में उन्हें जगह तक नहीं दी गई। इसका कारण बताते हुए अमितेश कुमार लिखते हैं, *"हबीब तनवीर के नाट्यालेख स्थिर नहीं है, वह प्रदर्शन के अनुसार उसमें परिवर्तन करते रहे हैं। इसलिए ऐसे अस्थिर आलेखों को नाटक की मान्यता देने में आलोचकों को दिक्कत हुई है, क्योंकि नाटक का मतलब रहा है एक स्थिर पाठ।"*[5]

यह सही है कि हबीब तनवीर के अधिकांश नाटक लिखित रूप में नहीं हैं। इसका मूल कारण उनका इम्प्रोवाईजेशन पद्धति द्वारा नाटक को तैयार करना था जिससे वे अपने नाटकों का लेखन नहीं कर पाये। उन्होंने कभी भी अंतिम रूप से नाटक लिख कर उसे मंचन के लिए नहीं

---

2 प्रसाद, प्रो. कमला (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. सम्पादकीय से

3 शुक्ल, प्रयाग (सं.); रंग प्रसंग; राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली; जनवरी-जून, 1999; पृ. 115

4 तनेजा, जयदेव; नाट्य प्रसंग; तक्षशिला प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2017; पृ. 119

5 कुमार, अमितेश; 'हबीब तनवीर की रंगमंचीय प्रयोगशीलता'; अपूर्वानंद (सं.); आलोचना; अंक 58; अप्रैल-जून 2016; पृ. 67

दिया। इसी कारण उनके नाटक स्वतंत्र रूप से भी बहुत बाद में छपे हैं। उनके नाटक की प्रस्तुतियों के बीच में वह स्पेस, जिसे हबीब नाटकीय दृश्य-बिम्बों से भरते हैं, वह नाटक के छपे संस्करण में सामने नहीं आता है। इसीलिए उनकी प्रस्तुतियां उनके निर्देशन के संदर्भ में तो चर्चित होती रहीं, लेकिन नाट्य लेख के स्तर पर कोई गंभीर चिंतन नहीं किया गया।

हबीब तनवीर के नाट्य लेखन की बात करें तो मुख्यत चार रूप सामने आते हैं। पहला रूप बाल नाटक का है। दूसरा रूप मौलिक नाट्य लेखन का है। तीसरा रूप लोककथाओं, शैलियों आदि पर आधारित नाटकों का है। जैसे 'चरनदास चोर', 'बहादुर कलारिन', 'हिरमा की अमर कहानी' आदि। इनमें उन्होंने लोककथाओं की आधुनिक व्याख्या करते हुए उसे नाटक का रूप दिया है। चौथा रूप है- अनुदित या रूपांतरित। इसमें उन्होंने संस्कृत नाटकों एवं पाश्चात्त्य नाटकों को नाट्य रूपांतरण कर प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त हबीब तनवीर ने कुछ कहानियों को भी नाटक का रूप दिया है जिसमें 'शतरंज के मोहरे', 'देख रहे हैं नैन' प्रमुख नाटक हैं।

3.1 बाल नाटक

कम लोग यह जानते हैं कि हबीब तनवीर ने दिल्ली में आकर 1954 से अपने रंग जीवन के शुरूआती दौर में बड़ी गंभीरता, जिम्मेदारी और सर्जनात्मकता के साथ कई बाल नाटक लिखें और निर्देशित किये थे। हबीब के बाल नाटकों के संदर्भ में प्रसिद्ध नाट्य आलोचक जयदेव तनेजा लिखते हैं *"भारी बस्तों के बोझ तले दब रहे मासूम बच्चों की मौलिक कल्पनाशीलता को मारकर उन्हें रट्टतोतों की फौज में बदल रही आज की शिक्षा-पद्धति के लिए भी ये नाटक एक नया और बड़ा रास्ता दिखाते हैं।"* [6] विविध रंग रूप और शैलियों के उनके पांच बाल नाटक अलग-अलग और 'पचरंगी' नाम से एक साथ प्रकाशित हुए हैं। 'पचरंगी' नामक पुस्तक में उनके 'कारतूस',

---

[6] तनेजा, जयदेव; नाट्य प्रसंग; तक्षशिला प्रकाशन; नई दिल्ली; संस्करण 2017; पृ. 127

'चाँदी का चमचा', 'आग की गेंद', 'परम्परा', 'दूध का गिलास' जैसे बाल नाटकों को शामिल किया है।

कारतूस

हबीब तनवीर द्वारा सन् 1954 में रचित 'कारतूस' वजीर अली माज़ूल शाहे अवध की हिम्मत, वीरता और बुद्धिमत्ता को रेखांकित करने वाला एक ऐतिहासिक यथार्थवादी बाल नाटक है। हबीब तनवीर का यह नाटक सीबीएससी के पाठ्यक्रम का भी हिस्सा रहा। अपने आकार में यह नाटक काफी छोटा है जिसमें केवल चार ही पात्र हैं। इस कारण बच्चों द्वारा यह नाटक आसानी से खेला जा सकता है। नाटक का समय 1799 की एक रात है और यह रात गोरखपुर के जंगल में अंग्रेज कर्नल कॉलिंस के खेमे के अंदरूनी हिस्से पर घटित है।

नाटक की शुरुआत में कर्नल कॉलिंस अपने एक अंग्रेज लेफ्टिनेंट से बातचीत करते हुए उसे बताता है कि भारी फ़ौज के साथ वह वज़ीर अली को गिरफ्तार करने के इरादे से इस जंगल की खाक छान रहे है। कर्नल उसे यह भी बताता कि वज़ीर अली अंग्रेजों से बेपनाह नफरत करता है। उसने कंपनी के वकील का कत्ल कर दिया है और बागी होकर अपने कुछ जांबाज़ सिपाहियों के साथ नेपाल भाग जाने के मकसद से इस जंगल में छिपा हुआ है। वह यह भी बताता है कि उसके सिर पर भारी सरकारी इनाम है। कर्नल कॉलिंस को लगता है अंग्रेजों के दोस्त अवध के नवाब सआदत अली खाँ की फौजें और अंग्रेजी फौजें मिलकर उसे जल्दी ही पकड़ लेंगी। अब वह पूरी तरह घिर गया है और उसे गिरफ्तार कर लेना कोई मुश्किल काम नहीं है। तभी दूर से धूल उड़ती दिखाई देती है। सरपट घोड़ा दौड़ता हुआ एक सवार वहां आ पहुँचता है और कर्नल से तुरंत मिलने की इच्छा प्रकट करता है।[7]

[7] तनेजा, जयदेव; नाट्य प्रसंग; तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2017; पृ. 128-129

लेफ्टिनेंट उसे सआदत अली खां का कोई आदमी या वज़ीर अली की खबर देकर ईनाम लेने आया कोई मुखबिर समझता है। सवार एक सिपाही के साथ अंदर आता है और कर्नल से अकेले में कोई गुप्त या गंभीर बात करना चाहता है। कर्नल के इशारे पर सिपाही और लेफ्टिनेंट तम्बू के बाहर चले जाते हैं। सवार वज़ीर अली जैसे चालाक और जांबाज सिपाही को अकेले गिरफ्तार कर लाने का दावा करता है और इस मुश्किल काम के लिए कारतूसों (बंदूक की गोलियां) की मांग करता है। कारतूस देने के बाद कर्नल उससे उसका नाम पूछता है। सवार कर्नल को अपना नाम वज़ीर अली बताते हुए उससे कहता है कि *"आपने मुझे कारतूस दिए इसलिए आपकी जां बख्शी करता हूँ"*[8] फिर वह शान से बाहर निकल जाता है। कर्नल सन्नाटे में हक्का-बक्का उस जांबाज़ को जाते हुए चुपचाप देखता रह जाता है।

इस प्रकार एक लड़ाई के खेमे के अंदरूनी हिस्से के एक साधारण से दृश्य-बंध पर हबीब तनवीर ने एक छोटी सी कहानी लिखी। इस कहानी के माध्यम से उन्होंने आसुफुद्दौला, वजीर अली, सआदत अली, टीपू सुल्तान, शमसुद्दौला, लार्ड क्लाइव और लार्ड वैलाजिली के चरित्रों एवं उनके कामों का उल्लेख करते हुए इतिहास के एक पूरे दौर को नाटकीयता के साथ मंच पर बड़े सादगी से पेश कर दिखाया है। यह कार्य उनकी बिल्कुल गैरमामूली समझ और कला का नमूना है।

गधे

यह नाटक आधुनिक शिक्षा व्यवस्था पर व्यंग्य करता है। दुर्भाग्य यह है कि आज इस नाटक का कोई मूल पाठ उपलब्ध नहीं है। इस नाटक के माध्यम से यह बताया गया कि बच्चों को सृजनशील बनाने की बजाय उन्हें लगातार अनुकरणशील बनाया जा रहा है और पढ़ाई का बोझ उन पर लादा जा रहा है। *"इस नाटक में इंदिरा गाँधी के बेटों राजीव और संजय ने भी अभिनय*

[8] तनवीर, हबीब; कारतूस; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2012; पृ. 12

किया था। इस नाटक में बच्चों के स्वप्नों, कथाओं और उनके बनाये गए चित्रों को संयोजित करके एक बच्चों का शहर ही बनाया गया था।'' [9]

चांदी का चम्मच

'चांदी का चम्मच' नाटक गंभीर अभिप्राय का एक यथार्थवादी हास्य-बाल-नाटक है। इस नाटक के खेलने की अवधि लगभग 10 मिनट है। इसमें बड़े मनोरंजक तरीके से हबीब तनवीर ने स्वास्थ्य और नागरिक चेतना का मुद्दा उठाया है। इस नाटक का कार्य-व्यापार मुंबई शहर में एक सड़क के किनारे तिमंजले मकान की खिड़की और उसी ईमारत के नीचे एक खुली दुकान में घटित होता है। नाटक को खेलने की दृष्टि से इसमें रंग संकेतों का प्रयोग किया गया है। नाटक की शुरुआत में रंग संकेत है, *''मंच ऐसा हो मानो एक सड़क है जो दाएं से बाएँ जाती है। इस सड़क पर चलने वालों के सामने ही एक मकान है जिसकी केवल अगली दीवार और दीवार की अनगिनत खिड़कियाँ दिखाई दे रही हैं। मकान के बीचों बीच एक बड़ा फाटक है जहाँ से ऊपर जाने की सीढिया हैं। इस फाटक के पास ही एक दुकान है जो खुलने पर दीवार से तनिक आगे सड़क तक निकल जाती है।''*[10] इसी तरह नाटक के अंत में भी रंग संकेत है, जैसे *''पड़ोसिन कूड़ा उठा चुकी है। एक केले का छिलका पड़ा रह गया था। जाते समय पैर उस पर पड़ जाता है, फिसल पड़ती है। सब खिलखिलाकर हँस पड़ते हैं।''*[11]

देखा जाए तो इस नाटक में दुकानदार की शराफत और बेचारगी के मुकाबले तिमंजले से कूड़ा फेंकने वाली दबंग पड़ोसिन का मुँहफट चरित्र रोचक ढंग से उभरता है। पड़ोसिन प्रतिदिन अपनी खिड़की से चुपचाप नीचे कूड़ा फेंकती है जो नीचे दुकानदार के सिर पर गिरता

---

[9] कुमार, अमितेश; 'हबीब तनवीर की रंगमंचीय प्रयोगशीलता'; अपूर्वानंद (सं.); आलोचना; अंक 58; अप्रैल-जून, 2016; पृ. 90

[10] तनवीर, हबीब; पचरंगी; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2015; पृ. 21

[11] वही, पृ. 27

है और दुकान के अन्दर तक चला जाता है। दुकानदार बड़ी मासूमियत से अपनी यह समस्या महिला को बताता है, तो महिला न केवल उससे साफ मुकर जाती है बल्कि दुकानदार पर बदतमीज, लुच्चा और औरतों से छेड़छाड़ करने वाला जैसे आरोप लगा कर उस पर हावी हो जाती है। कुछ पड़ोसी उस झगड़ालू औरत के सामने दुकानदार को चुप रहने की सलाह देते हैं। तभी दुनियाभर में घुमा टोनी लंदन में देखी एक घटना का जिक्र करके अच्छी नागरिकता का उदाहरण भी पेश करता है। इस तरह से यहाँ मुंबई और इंग्लैंड की संकृति का एक वैषम्य उभरता है। फिर एकदम सबके सामने कूड़ा गिरता है। दुखी दुकानदार शिकायत भरी आवाज में फिर चिल्लाता है। लेकिन ऊपर से कोई जवाब नही आता। तभी दूकानदार का मित्र महिला को सबक सिखाने के लिए खिड़की की ओर देख कर पुकारता है कि कचरे के साथ एक चांदी का चम्मच भी नीचे आ गिरा है। जिसका हो ले जाए, नहीं तो मैं स्वयं ले कर चला जाऊंगा। पड़ोसिन लालच में फंस कर तुरंत चांदी का चम्मच लेने नीचे आ जाती है और सारी भीड़ उसे शर्मिंदा करके उसी से कूड़ा उठवाती है। वह वादा करती है कि फिर कभी कूड़ा नीचे नहीं फेंकेगी। वह व्यक्ति उसे समझाता है कि अपने घर की सफाई के लिए मुहल्ले में गंदगी फैलाना गलत है, कूड़ा-कूड़ेदान में ही डालना चाहिए।[12]

इस तरह यह नाटक सफाई और अपनी जिम्मेदारी के प्रति बच्चों को व्यवहारिक ज्ञान देता है। नाटककार ने अंत में पड़ोसिन को केले के छिलके से फिसलकर गिरने का दृश्य दिखाकर न केवल 'जैसी करनी वैसी भरनी' को सिद्ध कर दिया है, बल्कि समाज को सचेत और जागरूक रहने का भी संदेश दिया है। मुहावरों का बेहद असरदार एवं प्रवाहमय इस्तेमाल भी इस नाटक की ख़ूबी है।

---

[12] तनेजा, जयदेव; नाट्य प्रसंग; तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2017; पृ. 130

आग की गेंद

यह नाटक एक खेल और व्यवहारिक प्रयोग के ढंग से सूरज के बारे में बच्चों को जानकारी देने वाला पांच से दस मिनट का एक छोटा-सा बाल नाटक है। इसमें नाटककार ने अलिफ, बे और जीम को चरित्र बनाकर पेश किया है। नाटक का समय सूरज निकलने से पहले का है तथा स्थान जमीन है। नाटक में जीम दादी, सूत्रधार या अध्यापक जैसा वरिष्ठ चरित्र है जो नाटक की शुरुआत में अलिफ़ और बे जैसे जिज्ञासु बच्चों को सितारे और सय्यारा (ग्रह) का फर्क समझाता है। वह बताता है, *''सय्यारा गरम नहीं होता, सितारा गरम होता है- सय्यारा सितारे की रोशनी से तो आईने की तरह चमक सकता है मगर जिस तरह आईना खुद अपनी रोशनी से नहीं चमकता सय्यारा भी नहीं चमक सकता और सितारा इतना गरम होता है कि खुद रोशनी पैदा करता है। सय्यारे सूरज के गिर्द चक्कर लगाते हैं, सितारे नहीं लगाते।''*[13]

इसके बाद जीम एक गेंद के जरिए आग के गोले यानी सूरज की कहानी सुनाता है। अब गेंद नाटक के केंद में आ जाती है। पूरे नाटक में अलिफ और बे की नोकझोक के माध्यम से नाटककार ने बाल मनोविज्ञान की भी झलक पेश की है। अंत में जीम बच्चों को पृथ्वी के अलावा दूसरे आठ ग्रहों के नाम किताब से पढ़ने और याद करके आने पर सूरज की कोई नई कहानी सुनाने के वादे के साथ पर्दा गिरा देता है।

वास्तव में हबीब तनवीर का यह बाल नाटक एक खेल के माध्यम से बच्चों को सीखने के लिए प्रेरित करता है। यह पद्धति बिलकुल बोझिल नहीं है, बल्कि बच्चे रुचि के साथ अपने आसपास की चीजों, वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यह नाटक सूरज के महत्त्व को रेखांकित करता है। नाटककार लिखता है, *''सूरज की रोशनी न हो तो न हम जिंदा रह सकते हैं न जानवर, न पेड़, न फल- सूरज न हो पानी-हवा-बिजली-तेल-कोयला कुछ भी न हो- सूरज ही से तो जिंदगी*

[13] तनवीर, हबीब; आग की गेंद; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2012; पृ. 7-8

है।*"*[14] एक खास बात यह भी कि नाटक में प्रयुक्त विभिन्न रंग संकेत बच्चों को अभिनय करने में सहायक हैं।

परम्परा

यह नाटक भारतीय इतिहास पर आधारित पच्चीस-तीस मिनट का अपेक्षाकृत बड़ा नाटक है। सूत्रधार, नटी और प्राम्टर को मिलाकर इस नाटक में कुल 20 पात्र हैं। इसमें हबीब ने अपने अन्य बाल नाटकों की तुलना में रंग-संकेतों का काफी प्रयोग किया है। जैसे नाटक के शुरुआत में रंग-संकेत है, *"पीछे के पर्दे पर हिंदुस्तान का नक्शा बना हुआ है। स्टेज के बीच में पर्दे से लगा हुआ एक तख्त बिछा है। आने-जाने के रास्ते तीन हैं-दाएं, बाएँ और बीच में। जब पर्दा उठता है, तो एक तरफ़ से सूत्रधार और दूसरी तरफ़ से नटी दाखिल होती है।"*[15] इसी तरह नाटक के बीच-बीच में भी अन्य रंग-संकेत हैं।

इसमें नाटककार ने आर्यों के आगमन अर्थात वैदिक काल से लेकर महात्मा गाँधी और देश के विभाजन तक का सम्पूर्ण भारतीय इतिहास बहुत संक्षेप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इस नाटक में राजनीति के साथ-साथ सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक पक्षों के इतिहास को भी समेटने की कठिन कोशिश की गई है। जयदेव तनेजा के शब्दों में, *"परम्परा में हबीब ने यथार्थवादी रंग-शिल्प को छोड़कर संस्कृत के शास्त्रीय और लोकनाट्य के पारम्परिक रंग-तत्त्वों के साथ कुछ प्रयोगधर्मी युक्तियाँ भी इस्तेमाल की हैं।"*[16] हिंदू-मुस्लिम एकता की विरासत को रेखांकित करने का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य भी इसके साथ जुड़ा है।

नाटक में सूत्रधार और नटी की नोंकझोक भी मजेदार ढंग से दिखाई गई है। सूत्रधार भारतीय इतिहास को छः भागों में बाँट कर दिखाना चाहता है, परन्तु नटी एक ही बार में एक साथ

---

[14] तनवीर, हबीब; आग की गेंद; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2012; पृ. 8

[15] तनवीर, हबीब; परम्परा; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2004; पृ. 4

[16] तनेजा, जयदेव; नाट्य प्रसंग; तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2017; पृ. 131

कहानी कह देना चाहती है। इस प्रक्रिया में दो-दो, चार-चार संवादों वाले चरित्रों, क्षणिक दृश्यों के बीच किताबों, सूचनाओं, मूर्तियों, तस्वीरों साहित्यकारों इत्यादि की चर्चा द्वारा परिगणन शैली में सारा इतिहास समेटा गया है। सूत्रधार का नटी को यह कहना कि, *"शुरू से तुम यही कर रही हो। सारा इतिहास बिगाड़ के रख दिया"* [17] नाटककार की सहजता, विवशता और स्पष्टता का भी प्रमाण है।

कुल मिलाकर बच्चों द्वारा खेले जाने की दृष्टि से देखें तो यह नाटक भारतीय परम्परा की झलक तो देता है, लेकिन फ़ास्ट फॉरवर्ड स्टाइल में। जल्दबाजी में कहीं-कहीं काल-क्रम भी गड़बड़ा गया है। नाटक बच्चों के हिसाब से थोड़ा लम्बा जरुर है लेकिन इसमें सहूलियत यह है कि प्रत्येक बच्चे को केवल कुछ संवाद बोलने हैं, जिन्हें वह आसानी से याद रख सकता है।

दूध का गिलास

दूध का गिलास नाटक बच्चों को दूध पीने के लिए प्रेरित करता है। इस नाटक में मुख्य रूप से पांच चरित्र हैं तथा नाटक की अवधि है 15 मिनट। इस नाटक में दूध के विभिन्न संघटक विविध चरित्र हैं। जैसे शीरीं (शक्क्कर), बी. प्रोटीन (प्रोटीन), मिक्खू बेगम (चर्बी) और जल्लो आपा (पानी) के रूप में। ये सभी पात्र बिट्टू (छोटी बच्ची) के सपने में आते हैं और उससे बात करते हैं। इस नाटक के बारे में जयदेव तनेजा लिखते हैं, *"दूध का गिलास अत्यंत कल्पनाशील, शिक्षाप्रद, तकनीक–समृद्ध और दिलचस्प नाटक है। ये नाटक निर्देशक की रचनाशीलता को उकसाता है। स्वयं हबीब तनवीर ने इसे प्रस्तुत करते समय दूध के तत्त्वों की एकता और झगड़े को प्रदर्शित करने के लिए दो प्रकार के नृत्यों का सार्थक प्रयोग का किया था।"* [18]

---

[17] तनवीर, हबीब; परम्परा; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2004; पृ. 10

[18] तनेजा, जयदेव; 'हबीब तनवीर की रंगचेतना और उनका बालरंग'; प्रयाग शुक्ल (सं.); रंग प्रसंग; अक्तूबर-दिसम्बर 2005; पृ.169-170

नाटक की कथावस्तु यह है कि बिट्टू एक बच्ची है जो दूध पीना बिल्कुल पसंद नहीं करती। माँ ने उसे दूध का गिलास दिया है, जिसे वह बिना पिए मेज पर रख कर सो गई है। सपने में वह दूध नगर पहुंच जाती है जहाँ सब कुछ दुधिया चांदनी-सा सफेद, साफ और शफ्फाक है। दूध के घटक शीरीं, भिक्खू बेगम, बी प्रोटीन और जल्लू आपा वहां मौजूद हैं। शीरीं चुपके से आकर बिट्टू को अहिस्ता से जगती है और दूध के बारे में उसे कई नई और दिलचस्प बातें बताती है। सफोफ, मिठाई, मक्खन और व्हेल मछली, गाय, बकरी आदि के दूध के फर्क के बारे में जानकर बिट्टू सचमुच हैरान रह जाती है। शीरीं और मिक्खू बेगम के बाद वहां जल्लो आपा तूफान आने की खबर लेकर आती है। खबर सुनते ही बी. प्रोटीन सहित सब बहने परस्पर लड़ने-झगड़ने लगती है। कैल्शियम बानो और अन्य नमकों (दूध में पाए जाने वाले विविध साल्ट) चार-पांच छोटी-छोटी लड़कियां तूफान के टल जाने की मुबारक खबर लेकर आती है और सभी बहनों में पुनः प्यार और मेल-मिलाप हो जाता है।[19]

दूध फटने के कई कारणों की चर्चा के बाद जल्लो आपा बताती है कि दूध का फटना *"न धुल की वजह से होती है। न बादल की वजह से...न बिजली की वजह से, न तूफान से पहले...जब जिस ओर गर्मी होती है उससे दूध फट जाता है।"*[20] शीरीं दूध के विभिन्न तत्त्वों की विशेषताएँ और उसके लाभ बताकर सूरज के उगने के साथ ही जाने को होती है कि बिट्टू का ख्वाब टूट जाता है। सभी चरित्र वहीं ज्यों के त्यों स्थिर हो जाते हैं। बिट्टू और दर्शकों को सर्वाधिक आश्चर्य यह जानकर होता है कि नाटक के सभी पात्र और खुद बिट्टू स्वप्न में दूध के गिलास में ही है। फिर बिट्टू अपने बिस्तर से उठती है और स्वप्न के चरित्र को याद करते हुए मुस्करा कर दूध का गिलास उठा कर पी जाती है। यह एक स्वप्न नाटक है। इसमें दूध के विभिन्न संघटक मानवीकरण द्वारा विभिन्न

---

[19] तनेजा,जयदेव; नाट्य प्रसंग; तक्षशिला प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2017; पृ. 132-133

[20] तनवीर, हबीब; दूध का गिलास; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2009; पृ. 15

चरित्रों के रूप में प्रस्तुत किये गए हैं। चूँकि नाटक बच्चों के लिये लिखा गया है इसलिए हबीब तनवीर ने हिन्दुस्तानी और उर्दू भाषा का प्रयोग किया है। भाषा का ऐसा सरल प्रयोग न बच्चों के लिए कठिन है और न ही दर्शकों के लिए। मूल बात यह है कि यह नाटक बच्चों को दूध पीने के लिए प्रेरित करता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हबीब तनवीर एक सजग बाल नाटककार के रूप में हमारे सामने आते हैं। वह शुरुआत से ही भाषा-संवाद के प्रति भी सचेत और जागरूक रहे हैं। बोली और बोलचाल की सहज ग्रहणशीलता, प्रवाहमयता उन्हें हमेशा आकर्षित करती रही है। इस दृष्टि से देखें तो चाँदी का चम्मच उनका सबसे अच्छा बाल नाटक है। क्योंकि इसमें मुहावरों का बड़ा खूबसूरत इस्तेमाल हुआ है तथा बच्चों के लिए भी शिक्षाप्रद है। टोनी बम्बई का निवासी का है, जहाज पर नौकरी करते हुए दुनिया घूमा है और नाटक में इंग्लैंड की एक घटना का जिक्र कर रहा है। उसके संवाद में हिंदी के साथ अंग्रेजियत और बोलचाल की बम्बइया भाषा के सभी रंग एक साथ संतुलित एवं स्वाभाविक रूप में मौजूद हैं। पात्रानुकूल भाषा का खूबसूरत नमूना इस नाटक में टोनी के संवाद हैं। वहीं दूध का गिलास में *''जाड़ों में हम भी बालाई का मोटा लिहाफ ओढ़कर सो रहते हैं''*[21] जैसे संवाद शायर हबीब तनवीर की याद दिलाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बाल नाटकों के लेखन से हबीब तनवीर अपने रंगकर्म की शुरुआत करते हैं। वे बाल मन के बड़े पारखी थे। हबीब तनवीर मानते थे कि 'कहानी कहना ही रंग प्रस्तुति का पूरा खेल है' तथा 'जब तक थियेटर करता रहूँगा हैरतजदा होने और हैरतजदा करने का सिलसिला चलता रहेगा।' हबीब तनवीर के रंगकर्म की ये दोनों बुनियादी विशेषताएँ उनके इस आरंभिक बाल नाटक में भी बड़े साफ और प्रभावशाली रूप में दिखाई देती हैं। आज बच्चों की मौलिक रचनात्मकता को उकसाते हुए उनके साथ मिलकर रंगकर्म करना हमारी शिक्षा नीति का

[21] तनवीर, हबीब; दूध का गिलास; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2009; पृ. 15

अनिवार्य अंग होना चाहिए। ब. व. कारंत, रेखा जैन जैसे मौलिक रंग-दृष्टि सम्पन्न रंग-कर्मियों के साथ-साथ हबीब तनवीर ने भी इसे अपने ढंग से पूरी तरह प्रमाणित किया है।

3.2 मौलिक नाटक

हबीब तनवीर के अधिकांश नाटक उनके मौलिक नाटक थे। दूसरे नाटककारों की कृतियों को भी उन्होंने अपने मौलिक ढंग से प्रस्तुत किया है। शेक्सपीयर तक के नाटकों की प्रस्तुति में उनकी अलग छाप दिखाई पड़ती थी। हबीब तनवीर अपने ढंग से नृत्य और गीतों को मूल नाटक के साथ जोड़ने में सिद्धहस्त थे। दर्शक कथानक में कहीं भी रूकावट महसूस नहीं करते थे। संवाद प्रधान नाटक को घटना प्रधान बना कर वे उसे रोचक बना देते थे। उनके नाटकों में सब कुछ स्वाभाविकता से घटित होता था। वे गीत-संगीत के प्रति खूब सजग थे। हबीब तनवीर ने भारत वर्ष में ही नहीं, विश्व के अनेक देशों में उत्कृष्ट प्रदर्शन किये। उनके मौलिक नाटक इस प्रकार है।

शांतिदूत कामगार

हबीब तनवीर के लेखन का प्रारम्भ स्ट्रीट प्ले नाटकों से हुआ है। स्ट्रीट प्ले, जिसकी रचना किसी तत्कालीन मुद्दे को लेकर की जाती है और मुद्दे के समाप्त होने के साथ उस नाटक का महत्त्व या उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। इसी तरह का एक स्ट्रीट प्ले 'शांतिदूत कामगार' भी है जिसे हबीब तनवीर ने लिखा। यह नाटक उन्होंने तब लिखा जिस वक्त हबीब के हाथों में इप्टा की बागडोर थी। उन दिनों यह मिलों के गेट पर खेला जाता था। इस नाटक में शांति का प्रचार था तथा बेहतर मजदूरी के लिए कामगारों को हड़ताल के लिए प्रतीत करता था। हबीब तनवीर बताते हैं कि *''सरकार वाममार्ग विरोधी थी और मेरा एक नाटक पुलिस द्वारा जाँच पड़ताल के लिए जब्त किया गया और फिर उन्होंने उसे कभी नहीं लौटाया।''*[22] इस नाटक को पहले दीना पाठक ने और

[22] तनवीर, हबीब; 'ए लाइफ इन थियेटर'; कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 17

फिर बाद में खुद हबीब ने निर्देशित किया था। खेद यह है कि आज इस नाटक का आलेख उपलब्ध नहीं है।

आगरा बाज़ार

यह नाटक अठारहवीं सदी के उर्दू शायर नज़ीर अकबराबादी की रचनाओं और समय पर आधारित है। उनकी शायरी में उस समय के आगरा के तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक वातावरण का चित्रण मिलता है। नज़ीर की पूरी शायरी हिदुस्तानी आवाम का बारामासी मेला प्रतीत होती है। 'आगरा बाज़ार' में कोई नायक या मुख्य पात्र नहीं है, बस एक ककड़ी बेचने वाले के इर्द-गिर्द ही पूरा वातावरण रचा गया है, जिसकी ककड़ियाँ कोई नहीं खरीद रहा है। अन्य फेरीवाले और दुकानदार भी रोटी के लिए जूझ रहे हैं। इसी ककड़ी वाले को नाटक का केंद्रीय बिन्दु माना जा सकता है। क्योंकि यही तो अंत में नजीर द्वारा लिखी कविता को गा-गाकर आसानी से अपनी ककड़ियाँ बेचने लगता है। उसको देखकर तरबूज वाला और लड्डू वाला भी यही करतें हैं। ककड़ी पर नजीर की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

" क्या प्यारी-प्यारी मीठी और पतली-पतलियाँ हैं

गन्ने की पोरियाँ हैं, रेशम की तकलियाँ हैं

फरहाद की निगाहें, शीरीकी हँसलियाँ हैं

मजनूँ की सर्द आहें, लैला की उँगलियाँ हैं

क्या, खूब नर्मों-नाजुक इस आगरे की ककड़ी

और जिसमें ख़स काफिर इस कंदरे की ककड़ी।"[23]

[23] तनवीर, हबीब; आगरा बाज़ार; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2010; पृ. 106

इस ककड़ी वाले की नज़्म का अपना प्रतीकात्मक महत्त्व भी है। क्योंकि नज़ीर ने शायरी को घिसे-पिटे सामंती परिवेश, चौरबासी शैली और बिम्बों के स्थान पर आस-पास की ज़िंदगी, उसके उभरते सवालों को भी शायरी मे जगह दी। शायरी को परिवर्तनशील और आधुनिक बनाया।

हबीब तनवीर समाज की नब्ज़ को पकड़ने वाले नाटककार हैं। जिन्होंने इस नाटक में आगरा के बाज़ार को केंद्र में रखते हुए आज के बाजार का यथार्थ चित्रण किया है तथा नज़ीर की शायरी के माध्यम से मानवीय मूल्य, संस्कृति, सामाजिकता को जिन्दा रखने कि कोशिश की गई है। फकीरों के माध्यम से हबीब तनवीर ने कहलवाया भी है-*"हम तो न चाँद समझे, न सूरज हैं जानते/ बाबा, हमें तो ये नज़र आती हैं रोटियाँ।"*[24]

नाटक में आगरा की आम जिन्दगी का पूरा परिदृश्य नज़ीर की कविताओं के माध्यम से खींचा गया है। नाटक में कुछ नहीं घटता, सिर्फ आम आदमी की लीला चलती है। पूरे नाटक में नजीर कहीं नहीं आते। बस दो बार उनकी नन्ही-सी नवासी आती है। परन्तु उनकी शायरी से उनकी अनुपस्थिति का अहसास नहीं हुआ। इस बारे में हबीब ने लिखा है, *"मैं नजीर को रंगमंच पर नहीं लाया क्योंकि मैंने महसूस किया उनकी जिन्दगी के बारे में बहुत ज्यादा जानकारी थी नहीं, सिवाय कुछ घटना-प्रसंगों के, लेकिन उनकी शायरी पूरे देश को आच्छादित किये चलती है इसीलिए उसी को रंगमंच पर भी छाने देना चाहिए। सब जगह वह शायर रहे जिसमें उस शायर की उपस्थिति भी हैं लेकिन वह नहीं हैं। तो मैंने वहां जाकर एक रंगमंच पर एक बाजार प्रस्तुत किया जिसमें दो धुर्वों का निर्माण किया। एक और पतंग बेचने वाले की दुकान और वहां पर पतंगों के बारे में बतियाने की आम भाषा में बातचीत बोली जाने वाली जुबाने और दूसरी तरफ किताबें बेचने वाले की दुकान जहाँ शायर, आलोचक और इतिहासकर इकट्ठे होते हैं और एक साहित्यिक*

[24] तनवीर ,हबीब ;आगरा बाज़ार ;वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली ;2010 संस्करण ;पृ. 52

भाषा बोलतें हैं, नज़ीर की बुराई करते हैं और ग़ालिब, मीर और दूसरे शायरों की तारीफ जबकि सामान बेचने वाले नजीर की कविताएँ गाते हैं क्योंकि उन्होंने वह उनसे लिखवाई है और उनका सामान जो पहले नहीं बिक रहा था फौरन सब बिक जाता है तब वे नज़ीर की शायरी गाना शुरू करते हैं। यही नाटक का क्षोभ है।''[25]

नज़ीर अकबराबादी की कविता जन जीवन के उत्सवों, उल्लासों से भरी हुई है। इस नाटक में भी ऐसे अनेक अवसर आते हैं जहाँ लोक की स्वाभाविक अभिव्यक्ति हुई है। जैसे होली पर उनकी यह नज्म देखें–

''मुँह लाल, गुलाबी आंखे हो, और हाथों में पिचकारी हो
उस रंग-भरी पिचकारी को अंगिया पर तककर मारी हो –
भडवे भी भडवा बकते हों तब देख बहारे होली की..''[26]

इसके साथ ही नाटक में एक तरफ बलदेव, किसन कन्हैया, गुरुनानक देव, गणेश, महादेव और खुद नजीर भी विराजे हैं तो दूसरी तरफ तैराकी का मेला हो रहा है, पतंग उड़ रही है, कहीं रीछ नाच रहा है, तो कहीं ककड़ी, तरबूज, तिल के लड्डू हैं। यहां कुछ भी ऐसा नहीं है जो शायरी काविषय न हो सके या हबीब तनवीर के रंगमंच के मेले में समा न सके।

हबीब तनवीर यहाँ अनेक बोलियों को अपनाते हुए जिस भाषा को गढ़ते हैं वह आम आदमी की जीवन्तता के कई रंग रूप को उभारती है। यहाँ बाजार के बीच आम आदमियों द्वारा बोली जाने वाली भाषा, ठेठ आंचलिक भाषा है जिसमें कहीं आपसी सौहार्द्र है, तो कहीं गाली-गलौज। कहीं जीवन का उत्सव है, तो कहीं संघर्ष का चित्रण। किताबों की दुकान पर अदीबों और शायरों की जुबान का अंदाज निहायत अदब और कायदे की नफासत लिए हुए है। पतंग की

---

[25] प्रसाद, कमला (सं.); कलावार्ता; अंक 103; 2003; पृ. 21

[26] तनवीर, हबीब; आगरा बाज़ार; संस्करण 2010; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2010; पृ. 96

दुकान या बाई जी के कोठे पर बोली जाने वाली जुबान का मुहावरा उस वक्त के शौकीनों और अय्याशीपरस्त लोगों का मुहावरा है। अलखनंदन को दिए गए एक इंटरव्यू में हबीब तनवीर ने 'आगरा बाज़ार' की भाषा के बारे में बताया कि-

" 'आगरा बाजार' में मैंने उर्दू बड़ी मेहनत से हासिल करके लिखी... मिर्जा फरहतुल्ला बेग की 'दिल्ली की आवाजे' एक किताब है। इसमें ये बेचने वाले, कटोरे वाले, जीरा पानी बेचने वाले किस–किस तरह से बोली लगते हैं तो उसकी भी खूबसूरती, करखनदारी भी उसके अंदर। वह दिल्ली की भाषा के बारे में छोटी–सी किताब है। तो उसमें से मैंने बहुत सारे पैसेज लिए, उनका इस्तेमाल किया। तो बाजार की बोली वह और किताब की दुकान में जो जुबान है, वो है मोहम्मद हुसैन आजाद ने जो किताब 'आबे हयात' लिखी है, उर्दू लिटरेचर की हिस्ट्री। वे बड़े जबर्दस्त स्टाइलिस्ट थे। और उनकी जुबान का बड़ा गहरा असर मुझ पर शुरू से,तालीबे इल्मी के जमाने से था। तो कुछ उस अंदाज की मैंने जुबान लिखी है।"[27]

असल में हबीब तनवीर का थियेटर अपने समकालीन जीवन और समाज में हस्तक्षेप करता है। उनका रंगकर्म मूल धारा से अलग कर दिय गए लोगों की पीड़ा का चितेरा है। साथ ही धर्म-संप्रदाय, जाति-पाति, अमीर-गरीब आदि भेदों को खत्म करके समानता व स्वतंत्रता पर आधारित मनुष्यता का पक्षधर है। ये सभी मूल्य हमारे लोक समाज में मौजूद रहे हैं। पूरे नाटक में क़ुतुबफरोश, तजकिरानवीस, पतंगवाला आदि के माध्यम से कुलीन और जनवादी दृष्टि के बीच एक संघर्ष जारी रहता है और अंत में बाजी लगती है तो जनकवि नज़ीर के हाथों।

इस तरह भारतीय रंगमंच पर हबीब तनवीर का यह नया रंग मुहावरा पहली बार पूरी शिद्दत के साथ उभरता है जो रंगमंच के प्रचलित मुहावरे के सन्दर्भ में बिलकुल भिन्न प्रदर्शन

---

[27] अलखनंदा; अपने दिल की सच्ची बात लिखिये (हबीब तनवीर से बातचीत); प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 55

था। फिर भी दर्शकों को बहुत सहज और परिचित लगा। नाट्य आलोचक इकबाल नियाजी ने 'आगरा बाजार' का मूल्यांकन करते हुए लिखा है, *''आगरा बाज़ार जैसे नाटक की प्रस्तुति ने हिन्दुस्तानी नाटककारों के सामने ये मिसाल पेश की, कि किस तरह यथार्थवादी ढांचों को पसंद करके पश्चिमी और पूर्वी ड्रामा रिवायतों से जुड़कर एक नए तरह की तर्ज पर ड्रामों को प्रस्तुत किया जा सकता है। जिसमें लोक नाटक के फॉर्म को और उसके असर को जान-बूझकर ठूँसा नहीं गया, फिर भी नाटक के डायलाग से लोक नाटक की अदायगी व कारीगरी के रंग फूटते हुए महसूस होते हैं।''*[28]

मेरे बाद

'आगरा बाजार' में कवि नज़ीर के समय और उनकी शायरी को सफलता से प्रस्तुत करने के बाद यह हबीब का दूसरा ऐसा नाटक था जिसमें एक बार फिर से किसी कवि की दस्तक थी। यह नाटक ग़ालिब की जिन्दगी और उनकी नज्मों के ऊपर लिखा गया उनका एक मौलिक प्रयोग था जोकि असफल रहा। इसे ग़ालिब की जन्म शताब्दी के अवसर पर 1968 में किया गया था। हबीब तनवीर ग़ालिब को एक भिन्न रूप में चित्रित करना चाहते थे। उनके मन में ग़ालिब एक ट्रैजिक व्यक्ति के रूप में आते थे, वे उन्हें उसी रूप में चित्रित करना चाहते थे, हिरोइक ग़ालिब के रूप में नहीं। हबीब लिखते हैं, *''नाटक लिखने का कारण यह था कि उनकी जिन्दगी पर किताबों में मुकम्मल ढंग से विचार नहीं किया गया था। उनकी मानवीय भूलों के लिए रक्षात्मक नीति अपनाई गई थी, आलोचना में भी व्यक्तिगत आघात किया गया था... नाटक में उनके समकालीन किरदारों को पेश करने में प्रस्तुतिजन्य छूट ली गई थी। ग़ालिब पर चले मुक़दमे के एक अंश को बिना छेड़-छाड़ के लिया गया था।''*[29]

---

[28] वाजपेयी, अशोक (सं.); नटरंग; अंक 86-87, जुलाई-दिसम्बर, 2010, पृ. 58

[29] कुमार, अमितेश; 'हबीब तनवीर की रंगमंचीय प्रयोगशीलता'; अपूर्वानंद (सं.); आलोचना; अप्रैल-जून, 2016; पृ. 71

यह नाटक एंटी ग़ालिब तो नहीं था, पर दुखांत जरुर था। कोर्ट में ग़ालिब का अपमान हुआ और उस धक्के से उनकी मृत्यु हो जाती है। एक तो यह कथानक परम्परा से हटकर था फिर जन्मशती वार्षिकी के अवसर पर ग़ालिब के दुखद अंत को दिखलाने वाला नाटक खेला जाना सबको पसंद आयेगा या नहीं यह डर भी हबीब के मन में था। इसलिए अंत तक उन्होंने कमेटी को नाटक का स्क्रिप्ट भेजा ही नहीं। दूसरा यह भी था कि नाटक का लेखन और तैयारी दोनों साथ-साथ चल रहे थे, इसलिए आलेख नहीं भेजा गया। *''नाटक खेलने का दिन आया, नाटक शुरू हुआ पर खत्म होने को ही न आए। आलेख तीन चार घंटे हो गया था, न आलेख को देखने का समय मिला था न उसके खेलने में लगने वाले समय का अंदाजा था। लोग बीच में ही उठ कर चले गए। इस नाटक में हबीब जी ने ग़ालिब की प्रचुर गज़लों का पाठ किया। इस नाटक में उन्होंने बेहतरीन उर्दू का इस्तेमाल किया।''*[30]

'इंद्र लोकसभा'

सन 1971 में हबीब तनवीर के निर्देशन में नया थियेटर द्वारा प्रस्तुत' इंद्र लोकसभा' एक नयी दिशा देने के कारण उल्लेखनीय है। यह लोकसभा के मध्यावधि आम चुनाव में कांग्रेस के समर्थन के लिए पहले सड़कों पर फिर फाइन आर्ट थियेटर में खेला गया। *''संप्रेषण मुख्यतः संगीत द्वारा ही था, पर कुल मिलकर प्रचार–दृष्टि के अनुरूप ही उसमें राजनैतिक स्थिति का सरलीकरण अधिक था, इसलिए कोई कलात्मक आयाम नहीं पैदा हो सका।''*[31] यह पोस्टर प्ले जितना प्रसिद्ध रहा उतना ही विवादित भी। इसका मंचन छत्तीसगढ़ी कलाकारों के साथ एक ट्रक पर किया जाता था और उसी ट्रक पर कलाकार एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते थे। कुछ ही मिनटों में ट्रक को स्टेज में बदलकर लगभग 40 मिनट का नाटक खेलकर आगे बढ़ जाते थे।

---

[30] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक रंग व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1997; पृ. 102

[31] जैन, नेमिचंद; तीसरा पाठ; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 1998; पृ. 179

जयदेव तनेजा का इस नाटक के बारे में विचार है, *"हबीब तनवीर के कुछेक नाटकों में लेखक–प्रस्तुतकर्ता की दृष्टि लोक-तत्त्व पर रही है और 'इंदर लोकसभा' तो शहरी संभ्रांत वर्ग के लिए पेश करना था और इनका प्रभाव भी उद्देश्य के अनुकूल ही पड़ा। शहरी दर्शक उसे एक नई-अजीब–सी मजेदार चीज़ के रूप में ही ग्रहण किया। यही कारण है कि एक-दो नाटकों के बाद आम शहरी दर्शक की रूचि उनमें कम होती है।"*[32]

राजा चम्बा और चार भाई

अपने रंगमुहावरे की तलाश में हबीब तनवीर ने कई असफल प्रस्तुतियां दी। यह नाटक भी उनमें से एक था। नाटक में हबीब तनवीर ने अप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय एकता, स्थायित्व, और व्यवस्था को बनाए रखने की वकालत की है। *"इस नाटक में एक काल्पनिक देश पलाश की कहानी थी जिसके शासन से वंचित किए गए चार नागराई भाई आततायी राजा चंबा के खिलाफ विद्रोह कर देते हैं। इस विद्रोह के बढ़ने के साथ ही पड़ोस के साम्राज्यवादी राज्य मलख का हमला हो जाता है। इन सबके बीच में पलाश की गद्दी पर पंजाल का डकैत राजा रुजलु बैठ जाता है।"* [33]

इस प्रकार यह नाटक एक रूपकात्मक कथा के माध्यम से राजवंशों और सामंतशाही के पतन की दास्तान को तो कहता ही है, साथ ही यह भी कहता है कि देश के भीतर अंतर्कलह रहने पर विदेशी शक्तियां कैसे अपना कब्ज़ा जमा लेती हैं।

मंगलू दीदी

सन् 1984 में बिलासपुर की कार्यशाला में परिवार नियोजन से सम्बंधित इस नाटक को तैयार किया गया था। नाटक के संदर्भ में हबीब बताते हैं, *"Once I was asked to do*

---

[32] तनेजा, जयदेव; समकालीन हिंदी नाटक और रंगमंच; तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2002; पृ. 44

[33] कुमार, अमितेश; 'हबीब तनवीर की रंगमंचीय प्रयोगशीलता'; अपूर्वानंद (सं.); आलोचना; अंक-58; अप्रैल-जून, 2016; पृ. 76

something on Family Planing because despite governmental effort, dull plays were coming out. A friend in the Madhya Pradesh government, Ajay Shankar, turned around and said to me that you sit there with your archair criticism every time we get together, but what do we get? We get only secondgrade writers to help us. Anyone like you only sits comfortably and criticizes; make yourselves available and we'll show you better results. He put it in such a nice manner and I accepted and I went. I produced Manglu Didi, a hilarious comedy about family planning."[34] इसमें माँ और बच्चे के स्वास्थ्य से सम्बंधित बातों को भी रखा गया था।

इस नाटक में एक परिवार है जिसमें पांच बच्चे हैं। पति को बड़ा खाने की इच्छा होती है। तय होता है कि रात में बच्चों के सौ जाने के बाद बनेगा। बच्चों में से किसी ने सुन लिया और बड़ा बनाने की सामग्री ले–लेकर सो जाते हैं। पति-पत्नी में झगड़ा होता है। पत्नी-पति से कहती है कि बच्चा होगा तो अब छठवां तुम्हारे ही पेट से होगा। नाटक में भगवान जी के सौजन्य से यह काम हो जाता है। पति गर्भधारण करता है और उसका नाम मंगलू दीदी पड़ जाता है। गर्भपात कराने की बात को पत्नी मना कर देती है। मंगलू डाक्टर के पास जाता है। भगवान ग्रामीणों को बच्चों के बीच में अंतर रखने और सही समय पर गर्भ धारण करने की चेतना देता है।[35]

हबीब तनवीरने ने एक सामान्य मनोविज्ञान का सहारा लेते हुए स्त्री जीवन की जटिलताओं को बड़े ढंग से पेश किया है। विशेष रूप से एक पुरुष के गर्भधारण करने की हास्यकर स्थिति ने विषय को बड़े रोचक ढंग से पेश किया।

---

[34] तिवारी, अशोक (सं.); नुक्कड़ जन्म संवाद; अंक 23-26, अप्रैल 2004 - मार्च 2005; पृ. 215

[35] कुमार, अमितेश; 'हबीब तनवीर की रंगमंचीय प्रयोगशीलता'; अपूर्वानंद (सं.); आलोचना; अंक-58; अप्रैल-जून 2016; पृ. 84

सड़क

यह लघु नाटक आदिवासी क्षेत्रों में विकास-समस्या पर केन्द्रित है। उदारीकरण के बाद उससे हुए विकास के खोखले दावों की हकीकत बताने के लिए हबीब तनवीर ने 'सड़क' नामक नाटक तैयार किया था। नाटक में दिखाया गया है कैसे इस आधुनिक विकास से न केवल सामान्य जीवन अपितु उनकी संस्कृति भी प्रभावित हुई है।

इस नाटक की शुरुआत में एक जज के यहां एक मुकदमा आता है जिसमें उद्योगपतियों, व्यापारियों और नेताओं ने ग्रामीणों पर मुकदमा किया है कि उन्होंने वह सड़क तोड़ दी जो उनके विकास के लिए बनाई गई थी। सड़क खोदने के मुक़दमे के चलने के दौरान ही दोनों पक्षों के तर्कों से उस क्षेत्र के विकास से जुड़े पहलू सामने आते जाते हैं। ग्रामीणों का कहना है कि सड़क उनके विकास के लिए नहीं, बल्कि उद्योगपतियों के विकास के लिए बनी हैं। सड़क के आगमन से उनके जंगली जानवर, पेड़, फल इत्यादि समाप्त होते जा रहे हैं।

इस आधुनिक विकास से केवल सामान्य जीवन ही नहीं उनकी संस्कृति भी प्रभावित होती है। हबीब बताते हैं, *"... they came up with a wealth of details about why the road should be broken. Like: the weekly village market coming and disturbing our culture, foresters using the road and taking our rice or forest produce, our wealth going out because of the road, we getting exploited, deprived, our wildlife getting destroyed and killed by the road through which city tourists and foresters come and poach, and a millon reasons, what happens to the animals, the birds, the wildlife, the trees and environment, to agriculture, to things of daily usages-hard liquor comes through the road. We don't want it, we brew our own wines and they're nourishing etc.- therefore break the*

road. So it became a satire on development"[36] इस प्रकार नाटक में हबीब तनवीर भोले-भाले ग्रामीण लोग विकास की अवधारणा को ही सवालों के घेरे में ला देते हैं। इनके इन्हीं सब तर्कों के जाल में आगे बढ़ता यह नाटक अपनी बात कहने में सफल रहा है।

नाटक के माध्यम से हबीब कहना चाहते थे कि *"वस्तुतः आधुनिकता विविधता को प्रश्रय नहीं देती। वह एकरूपता को प्रोत्साहन देती है और एक ही वृतांत में सब को ढालना चाहती है। यह दरअसल उपभोक्ता-निर्माण की प्रक्रिया है...इस उपभोक्तावाद और विकास से जो हानि हो रही है उसकी चिंता बराबर हबीब तनवीर के साक्षात्कारों में देखी जा सकती है।"* [37]

इस नाटक में प्रयुक्त गीत भी विषय की संवेदना से जुड़े हुए हैं। यह नाटक आज भी सफलतापूर्वक खेला किया जा रहा है। अपने शुरुआत से लेकर अंत तक यह नाटक प्रफुल्लित करता है। हबीब तनवीर ने इस नाटक को भी इम्प्रोवाइजेशन के माध्यम से तैयार किया था। यह नाटक जितना उनका है, उतना ही उनके अभिनेताओं का है।

डैडी का घर

यह नाटक उन्होंने अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति के लिए 1995 में लिखा था। उस समय हबीब तनवीर दिल्ली के बेर सराय के मकान में अपने साथियों के साथ रह रहे थे कि तभी डीडीए ने उसे खाली करने का नोटिस दे दिया। हबीब ने अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण साल इसी मकान में गुजारे थे और अब उनसे जबरन यह घर खाली करवाया जा रहा था। इस कारण वे दिल्ली छोड़कर भोपाल चले गए। इस स्थिति की अभिव्यक्ति के लिए ही उन्होंने यह लघु नाटक तैयार किया। *"इसमें डैडी नाम डीडीए के आधार पर ही रखा गया था। यह नाटक नौकरशाही के रवैये पर*

---

[36] तिवारी, अशोक (सं.); नुक्कड़ जन्म संवाद; अंक 23-26, अप्रैल 2004 - मार्च 2005; पृ. 214

[37] कुमार, अमितेश; 'गाती-झूमती मज़े लेती वैकल्पिक आधुनिकता'; अभय कुमार दुबे (सं.); प्रतिमान; प्रवेशांक; जनवरी-जून, 2013; पृ. 279

आघात करता था, साथ ही उन्हें पिघलाने का भी उपक्रम था ताकि उन्हें और उनके छत्तीसगढ़ी अभिनेताओं को प्रदर्शन करने की जगह मिले या वह कायम रहे।''[38]

एक औरत हिपेशिया भी थी

हबीब तनवीर ने यह नाटक 'जन नाट्य मंच' के लिए नब्बे के दशक में लिखा और निर्देशित किया। यह नाटक समाज में बढ़ते कट्टरवाद के खिलाफ उनका एक वक्तव्य था। इस नाटक में एक ऐतिहासिक पात्र हिपेशिया के माध्यम से कट्टरता के परिणाम को दिखाया है जिसमें हिपेशिया को ईसाईयों के हमले का शिकार होना पड़ा था। वे उस खतरे के प्रति सचेत थे जिसमें किसी एक विचार या धर्म को ही सबसे उपयुक्त मान कर दूसरे के लिए जगह समाप्त कर दी जाएगी और इस स्थिति से एक अंधकार का युग आ जाएगा। जैसा कि हिपेशिया के मर जाने से यूरोप में गणित ख़त्म हो गया था। आज समकालीन परिप्रेक्ष्य में यह नाटक और भी प्रसांगिक हो गया है।

इस नाटक की कथा योजना दो स्तरों पर की गई है। एक स्तर पर कथा कहने वाले दो रावी हैं जो हिपेशिया की कथा कहते हैं और उस कथा को वर्तमान के संदर्भों से जोड़ भी रहे हैं। दूसरे स्तर पर हिपेशिया की भी कथा चल रही है। नाटक में दृश्यों को जोड़ने के लिए गीतों का प्रयोग किया गया है। इस नाटक की एक खास बात यह है कि इसमें हबीब तनवीर की शैली के विपरीत क्लिष्ट उर्दू का प्रयोग हुआ है जिससे दर्शकों को अर्थ समझने में कठिनाई हुई। *''हिपेशिया से पहले हबीब साहब के नाटकों की जबान किस कदर सादा और आम फहम हुआ करती थीं हिपेशिया में वो इस कदर मुश्किल और सकील हो गई कि नाजरीन नाटक देखने के साथ अपने सरों को खुजला-खुजला कर मतलब समझने की कोशिश करते नज़र आये।''* [39]

---

[38] कुमार, अमितेश; 'हबीब तनवीर की रंगमंचीय प्रयोगशीलता'; अपूर्वानंद (सं.); आलोचना; अंक-58; अप्रैल-जून, 2016; पृ. 74

[39] आजमी, अनीस; 'हबीब तनवीर : एक मुख़्तसर तआर्रुफ़'; प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103 (2003); पृ. 138

सुन बहरी

यह बी.बी. सी. का प्रोजेक्ट था जिसके तहत कुष्ठ उन्मूलन चेतना फैलाने के लिए एक नाटक तैयार करना था। उन्होंने एक नाटकीय कथा के जरिये लोगों को कुष्ठ की चेतना से अवगत कराया। *''इसमें बाबूलाल नाम के एक व्यक्ति के जिन्दा दफन होने की सूचना का पता लगाने के लिए पुलिस आती है। समाजसेवी गोरखनाथ हैं और एक चेतना है जो कुष्ठ रोगियों को शराब की भट्टी में मुफ्त दवा देता है। चेतना गाँव में आकर कुष्ठ रोग के बारे में फैली भ्रांति दूर करता है, बाद में पता लगता है कि चेतना ही बाबूलाल है। यह एक तरह का पोस्टर प्ले था। हबीब तनवीर ने ऐसे बहुत से छोटे-छोटे नाटक किये जो किसी मंत्रालय या फंडेड परियोजना का अंग थे।...चूँकि वे और उनका नाट्य दल पूरी तरह से रंगमंच पर ही आश्रित थे, उनके पास एक बड़ी टीम थी। उनको चलाने के लिए उन्हें पैसा चाहिए था और वह पैसा उन्हें इस तरह की प्रस्तुतियों से मिलता था। खास बात यह थी कि ऐसी प्रस्तुतियों में भी वह शैली, समाज और राजनीति को छोड़ते नही थे।''*[40]

उपरोक्त विवेचन के उपरांत कहा जा सकता है कि हबीब तनवीर के मौलिक नाटक विषय वस्तु की दृष्टि से उनके अन्य नाटकों से अलग नहीं दिखते हैं। क्योंकि यहां भी अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता को छोड़ते नहीं हैं। समाज की समस्याओं को उठाते नजर आते हैं। ये नाटक न तो किसी अन्य भाषा के नाटकों के अनुवाद है और न ही किसी विशेष लोक कथा या शैली को आधार बना कर रचे गए हैं। यह तो हबीब के दिलो दिमाग में अंकुरित होते विभिन्न भावों की उपज भर हैं।

---

[40] कुमार, अमितेश; 'हबीब तनवीर की रंगमंचीय प्रयोगशीलता'; अपूर्वानंद (सं.); आलोचना; अंक 58, अप्रैल-जून 2016; पृ. 74

3.3 लोक कथाओं आदि से संबंधित नाटक

हबीब तनवीर का विचार था कि लोक रंगमंच और बोलियों का रंगमंच ही सबसे सशक्त है। उनकी रंग चेतना उस सोच पर आधारित है जहाँ लोक परम्पराओं की सृजनात्मक क्षमताओं और ऊर्जा का स्वीकार्य है। यही कारण है कि वे इन परम्पराओं से गीत-संगीत, शैली कुछ भी लेने में जरा भी हिचकते नहीं। *''हिंदी रंगमंच में लोक शैली, परम्पराशील नाट्य का आधुनिक मुहावरा उन्होंने सृजित किया। इस नवाचारी रंग उपक्रम से हिंदी रंगमंच को नई शैली, नया आकार, नया विस्तार मिला।''*[41]

जाहिद खान का मत है कि *''लोक अदब और लोक रियायतों से हबीब तनवीर को बेहद लगाव था। उन्होंने कई लोक कथाओं को विकसित कर नाटक में तब्दील किया। मसलन जालीदार पर्दे- एक रुसी लोक कथा पर आधारित है तो सात पैसे- चेकोस्लोवाकिया की लोक कथा। अर्जुन का सारथी- छत्तीसगढ़ी कहानी, गाँव के नांव ससुराल मोर नांव दामाद-छत्तीसगढ़ी लोक कथा, ठाकुर पृथ्वी पाल सिंग- राजस्थानी लोक कथा, बहादुर कलारिन – आदिवासी लोक कथा पर आधारित नाटक है। इस नाटकों की खासियत ये है कि तनवीर ने इन लोक कथाओं को सीधे-सीधे ड्रामा रूप में तब्दील नहीं किया है बल्कि लोक कथा के केंद्रीय विचार को अपने हिसाब से विस्तारित किया इम्प्रोवाईज किया। यही नही, इन नाटकों को उन्होंने मौजूदा परिवेश से भी जोड़ा जो लोगों को खूब पसंद आया।''*[42]

'गाँव का नाम ससुराल मोर नाम दामाद', 'अर्जुन का सारथी', 'राजा चंबा और चार भाई', 'चरनदास चोर', 'शाही लकड़हारा','जानी चोर', 'प्रह्लाद नाटक','भारतलीला', 'चंदैनी', 'जमादारिन', 'बहादुर क्लारिन', 'देवी का वरदान', 'सोन सागर', 'मंगलु दीदी', 'हिरमा की

---

41 शर्मा, डॉ. कुंज बिहारी; छत्तीसगढ़ : हिंदी रंगमंच; वैभव प्रकाशन, रायपुर, छत्तीसगढ़; संस्करण 2008; पृ. 36

42 खान, जाहिद; 'एक लोक धर्मी आधुनिक'; अशोक वाजपेयी (सं.); नटरंग, 86-87, जुलाई-दिसम्बर, 2010; पृ. 55

अमर कहानी' आदि उनके ऐसे नाटक हैं जहाँ उनकी शैली की छाप देखी जा सकती है।

गाँव का नाम ससुराल, मोर नाम दामाद

इस नाटक का निर्माण रायपुर में आयोजित 'नाचा' की एक कार्यशाला के दौरान किया गया था। इसमें छत्तीसगढ़ के तीन लोकनाट्यों 'छेर-छेरी', 'बुढवा विवाह' और 'देवार-देवारिन' के चुनिंदा प्रसंगों को एक नाटक में पिरोया गया। कई प्रसंगों को मिलाने से उनके जोड़ दिखाई देने के बावजूद भी इस नाटक में रोचकता और विनोदपूर्व स्थितियां व चरित्र हैं, जिनसे सामाजिक विषमताओं और देहाती जीवन की कुरीतियों पर हल्का-सा व्यंग्य उभरता है।

इस नाटक के कथा के बारे में हबीब तनवीर ने लिखा है, *''छत्तीसगढ़ में शरद पूर्णिमा के दिन एक त्यौहार मनाया जाता है जिसे 'छेर-छेरा' कहते हैं। इस त्यौहार के दिन नौजवान लड़के अनाज और सब्जी लोगों से मांगकर जमा करते हैं और बाद में पूरा युवक समाज त्यौहार के मौक़े पर पिकनिक मनाता है। त्यौहार के दिन झंगलू और मंगलू गाँव के दो लड़के शांति और मानती के साथ छेड़छाड़ करते हैं। इसी बीच झंगलू को मानती से प्रेम हो जाता है। मानती का पिता इस निर्धन लड़के के बजाए एक बूढ़े मालदार सरपंच से मानती की शादी कर देता है। झंगलू अपने मित्र के साथ लड़की की तलाश में निकल जाता है। लड़के देवार जाति के लोगों का वेश बदलकर सरपंच के गाँव पहुँच जाते हैं। उसे छेड़ते और तरह-तरह से बेवकूफ़ बनाते हैं। इस समय गाँव में शंकर पार्वती की पूजा हो रही है जिसे 'गौरी-गौरा' कहते हैं। इस संस्कार में मानती भी शामिल है। झंगलू इस दौरान किसी तरकीब से अपनी प्रेमिका को भगा ले जाता है। नाटक प्रेम की जीत के गीतों पर समाप्त होता है।''* [43]

इस प्रकार नाटक को बहुत बनावटी रूप दिए बिना ही सार्थक बनाने की बेहतर कोशिश

[43] तनवीर, हबीब; गाँव के नांव ससुरार मोर नांव दमाद; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2012; पृ. भूमिका से.

की गई है। *''नाटक की सार्थकता एक तो इस बात में है कि पारंपरिक और लोक जीवन की कथा–सामग्री को नये ढंग से काम में लाने की कोशिश करता है। दूसरे, उसमें गीत, संगीत, नृत्य, प्रहसन, अभिनय, सामाजिक-धार्मिक अनुष्ठान तथा समसामयिक जीवन पर चुटीली टिप्पणी के कल्पनाशील संयोजन द्वारा एक प्रामाणिक और कलात्मक दृष्टि से आत्मसंगत नाट्य रूप का आधार दिखाई पड़ता है। इसलिए अपने आप में किसी बहुत महत्त्वपूर्ण, सूक्ष्म या गहरे अनुभव के अभाव में भी, वह नाटक लेखन के लिए नयी दिशाओं का सूचक है।''*[44]

इस नाटक की निर्माण प्रक्रिया के माध्यम से वे पहली बार लोककथाओं और लोकशैलियों में छिपी नाटकीय सम्भावना की शक्ति से परिचित होते हैं। नेमिचंद जैन का इस नाटक के बारे में विचार है *''प्रदर्शन में कथ्य और नाट्यरूप की आत्मा को बनाए रख कर एक तरह की सूक्ष्म कलात्मकता मौजूद थी, जो संरचनाओं, समूहनों,अभिनय क्षेत्र के भरपूर उपयोग में, तथा कार्य-व्यापार की निरंतरता के लिए इस्तेमाल की गई युक्तियों में दिखाई पड़ती है। संगीत और नृत्य का उपयोग भी बड़ा आकर्षक था। साथ ही छत्तीसगढ़ देहातों के शौकिया और पेशेवर गायक-अभिनेताओं की मिली-जुली मण्डली ने अभिनय भी बड़ी सहजता और आत्मविश्वस से किया।''*[45]

चरनदास चोर

'गाँव के नाम ससुराल, मोर नाम दमाद' के प्रयोग की सफलता ने इस नाटक के लिए रास्ता बनाया। इस नाटक की पृष्ठभूमि में राजस्थान के बोरुंदा में हुई ख्याल की एक कार्यशाला थी। इस कार्यशाला में प्रस्तुति के लिए हबीब ने विजयदान देथा की एक कहानी 'ठाकुर रो रूसनो' को चुना। मंचन के दौरान इसका नाम 'ठाकुर पृथिपाल सिंह' रखा गया था। इसी कार्यशाला में

---

[44] जैन, नेमिचंद; तीसरा पाठ; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 1998; पृ. 223

[45] वही, पृ. 223-224

हबीब ने देथा की एक दूसरी कहानी 'सच्चाई की बिसात' को भी प्रस्तुत करना चाहते थे। लेकिन तब बात बनी नहीं। बाद में इन्होंने भिलाई कार्यशाला में पहले 'चोर चोर' नाम से इसे खेला। बाद में इस नाटक का नाम 'चरनदास चोर' हुआ। हबीब ने *''इस राजस्थानी कथा को सत्यनामी बना दिया और उसका नाम सत्यनामी सम्प्रदाय के अनुसार 'चरनदास' रख दिया।''*[46]

हबीब तनवीर का यह नाटक देश-विदेश में सबसे ज्यादा लोकप्रिय नाटक रहा है। इसकी लोकप्रियता के सम्बन्ध में हबीब ने लिखा है, *''यह नाटक भारतवर्ष के कई बड़े- छोटे शहरों में खेला जा चुका है, साथ ही यूरोप के कई देशों में भी। हर जगह इसकी सराहना हुई है और नाटक के पहले प्रदर्शन से लेकर अब तक, अब जबकि यह नाटक प्रेस में जा रहा है, इस नाटक के लगभग पांच सौ शो ओ चुके हैं।''*[47]

हबीब ने नाटक में चोर की इस लोक कथा को दो अंकों में प्रस्तुत किया है। पहले अंक में चार दृश्य और दूसरे अंक में पांच दृश्य है। नाटक में छत्तीसगढ़ के लोक गीत, संगीत, नृत्य, आदि का प्रयोग भी आकर्षक है। देखा जाए तो यह नाटक एक सामान्य लोक कथा है जिसमें वे आधुनिक और सामाजिक विसंगतियों को उभरने के साथ-साथ एक बेहद रचनात्मक लोकनाट्य रूप देने में सफल रहे हैं।

यह प्रशासन के खिलाफ नाटक है जिसमें सिस्टम की बुराइयों को उजागर किया गया है तथा यह बताया गया है कि किस तरह से प्रशासन का खोखलापन और अन्य बुराइयाँ समाज में अच्छाइयों को पनपने नहीं देती। पुरे सड़े-गले सिस्टम में सच बोलने वाला एक व्यक्ति किस तरह फंसा हुआ है, यह इसके कथानक से स्पष्ट हो जाता है। नाटक में मानवीय संवेदनाएं, धर्म, संस्कृति, अनुष्ठान, रीति-रिवाज, वेशभूषा, गीत-संगीत तथा नृत्य सब कुछ मिल कर एकलोक रंगमंच का

---

[46] सहाय, डॉ. लक्ष्मण; रंगकर्म और नाटकार; तरुण प्रकाशन, गाजियाबाद; संस्करण 2016; पृ. 165

[47] वही, पृ. 164

निर्माण करते हैं। इसमें दिखाया गया है कि नाटक को किस तहर से एक जनपद की संस्कृति से जोड़ने की प्रक्रिया में छत्तीसगढ़ के लोकनाट्य 'नाचा' और प्रचलित 'सतनामी सम्प्रदाय' से जोड़ा गया है। साथ ही इसमें ब्रेख्त के प्रभाव को भी देखा जा सकता है।

पोंगा पंडित

छत्तीसगढ़ी में नाचा के एक लोकप्रिय प्रहसन पर आधारित 'पोंगा पंडित' (जिसे 'जमादारिन' के नाम से भी खेला गया है) को हबीब तनवीर ने कई बार प्रस्तुत किया है। यह हिंदू धर्म में व्याप्त कुरीतियों और पोंगा पंथी पर प्रहार करते हुए पुरोहितवाद की खुली आलोचना करता है। नाटक के सन्दर्भ में हबीब तनवीर बताते हैं, *''राजनांद गांव के ग्रामीणों ने 1935 में जब इस नाटक की कल्पना की थी तो इसका नाम 'पोंगा पंडित' ही रखा था। मैंने इसे 1960 में पहली बार देखा। नाटक मुझे बहुत पसंद आया और जब दो एक साल बाद मैंने इसे लोगों को दिखाना शुरू किया तो इस नाटक का नाम जमादारिन रख दिया, क्योंकि नाटक का धार्मिक विषय उसी पात्र के माध्यम से विकसित होता है।''*[48] इसमें जमादारिन को मुख्य रूप से केन्द्रित करते हुए पंडित के लालची चरित्र को भी दिखाया गया है।

नाटक की कथा में भकला अपने पिता की मृत्यु के बाद सत्यनारायण की कथा कहलवाने के लिए एक पंडित को घर लाता है। यहाँ भकला और पंडित के आपसी संवाद और क्रियाकलाप हास्य-व्यंग्य की स्थिति पैदा करते थे। इसी बीच जमादारिन का प्रवेश होता है। पंडित को जमादारिन के छूने से परहेज है लेकिन आरती में उसके द्वारा चढ़ाए गए पैसे से नहीं। धीरे-धीरे छूते हुए जमादारिन भगवान और आखिर में पंडित को भी छू लेती है। 'स्वर्ण कुमार साहू द्वारा लिखी गई जमादारिन में जमादारिन द्वारा गाए गए गीतों में वाल्मीकि, व्यास, कर्ण और अन्य लोगों का

---

[48] पोंगा पंडित और हबीब तनवीर; प्रगतिशील लेखक संघ का प्रकाशन; महावीर प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2012; पृ. 12

उल्लेख है जिन्होंने जन्म से नहीं बल्कि कर्मों से महानता हासिल की।'

कुल मिलकर *''जमादारिन जाति व्यवस्था पर हास्य के साथ धर्म के विचलित कर देने वाले रूप की भर्तसना करता है।''*[49] इस प्रहसन के माध्यम से छुआ-छूत जैसी कुरीतियों का विरोध भी हबीब तनवीर करना चाहते थे। इस नाटक के चलते हबीब तनवीर का हिंदूवादी सांप्रदायिक शक्तियों ने कड़ा विरोध किया था। लेकिन हबीब ने भी हिम्मत नहीं हारी, वह बार-बार इसका प्रदर्शन करते चले जा रहे थे।

बहादुर कलारिन

बहादुर कलारिन नाटक का सृजन छत्तीसगढ़ की लोक-कथा के आधार पर हुआ है। इस नाटक की मूल कथा बहुत छोटी है किन्तु वह जीवन में व्याप्त अंतर्विरोधों की छानबीन के मामले में हमें बहुत अर्थमूलक और बुनियादी प्रश्नों तक ले जाती है। इसमें छोटे तबके के लोगों की नियति के साथ ही सुख के लिए मनुष्य की खोज की मार्मिक पड़ताल की गई है। नाटक में बीस पात्र हैं, जिसमें बारह पुरुष और आठ महिला पात्र हैं। हबीब ने इस कथा को कल्पना के माध्यम से दस दृश्यों में नियोजित किया है। उन्होंने अंक और उसके दृश्यों के सिद्धांतों का प्रयोग वस्तु-विन्यास में नहीं किया है। पुरानी परिपाटी अंक-दृश्य को तोड़कर नये दृश्य-सिद्धान्त का अनुगमन किया गया है।[50]

नाटक में एक कलार यानी शराब बेचने वाली औरत, जिसका नाम बहादुर है, उसे कथानक में उभारा है। इस मिथक से सम्बंधित कुछ साक्ष्य उस इलाके में बिखरे पड़े हैं जिसका विवरण नाटक की भूमिका में विस्तार से दिया गया है। 'बहादुर कलारिन' का मिथक छत्तीसगढ़ के दुर्ग जिले के तहसील बालोद के सोरर और चिरचारी गाँव से सम्बन्ध है। हबीब तनवीर लिखते

---

[49] अग्रवाल, महावीर; छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य : नाचा; श्री प्रकाशन, दुर्ग, छत्तीसगढ़; संस्करण 1997; पृ. 199

[50] सहाय, डॉ. लक्ष्मण; रंगकर्म और नाटककार; तरुण प्रकाशन, गाजियाबाद; संस्करण 2016; पृ. 167-168

हैं, *"सन 1975-76 में इन देहातों का चक्कर मैंने पहली बार लगाया। उस समय तक गाँव के कुछ सयाने थे जो बहादुर और उसके बेटे का किस्सा जानते थे। 'दुर्ग परिचय' शीर्षक से एक छोटी-सी किताब मेरे हाथ आ गई थी जिसे राजनांदगांव के हिंदी साहित्यकार बलदेव प्रसाद मिश्र ने लिखा था।... इसी किताब में एक- दो पृष्ठ में बहादुर कलारिन का मिथक भी दर्ज था।"*[51]

बहादुर की इस कथा को हबीब ने छत्तीसगढ़ के देहाती लोगों की जुबानी सुना था। इस मिथक के अनुसार बहादुर एक खूबसूरत औरत थी जो शराब बेचने का काम करती थी। उसके बेटे छछन छडू ने एक सौ छब्बीस शादियाँ की थीं। लेकिन अंततः उसने अपनी माँ को ही वासना की नजर से देखा। माँ यह जानकर हैरान थी और उसने अपने ही बेटे को मारने का फैसला लिया। उसने जानबूझ कर उसे ज्यादा मिर्च मसाले वाला खाना खिलाया और घर के सारे बर्तन खाली कर दिए। उसने गाँव वालों को पानी देने से मना पहले ही कर दिया था। अब बहादुर ने उसे ही कुएं से पानी लाने को कहा और मौका पाते ही उसे कुएं में धकेल दिया। इसके बाद उसने अपने सीने में कटार भोंककर आत्महत्या कर ली।[52]

इस छोटी सी कथा पर नाटक लिखने के लिए हबीब तनवीर ने नाटक की भूमिका में तर्क भी दिए हैं। वे लिखते हैं, *"दरअसल लोक-कथा तो केवल माँ-बेटे के बारे में थी। प्रेमी, जिसके माध्यम से छाछन छाडू ने जन्म लिया, उसका न कोई जिक्र था और न उसका व्यक्तित्व कथा के अंदर दिखाया गया था। यह मेरी अपनी कल्पना की चीज़ थी। मेरे ज़ेहन में राजा इडिपस (Oedious Rex) का मिथक भी था। हमारे शास्त्रों में भाई-बहन के यौन-सम्बन्धों की ओर इशारा तो मिलता ही है, लेकिन एक लोककथा में 'इडिपस कॉम्प्लेक्स' जैसी मनोवैज्ञानिक बात की*

---

[51] तनवीर, हबीब; बहादुर कलारिन; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2004; पृ. 5

[52] सहाय, डॉ. लक्ष्मण; रंगकर्म और नाटककार; तरुण प्रकाशन, गाजियाबाद; संस्करण 2016; पृ. 167

गहराई देखकर मुझे अचम्भा हुआ था और एक प्रकार का गौरव भी महसूस हुआ था।''[53]

देखा जाए तो यह नाटक एक ट्रेजडी है। निर्देशक ने छछांक की अतृप्ति को अधिक नहीं उभारकर इस प्रसंग के जरिए स्त्री की घुटन और गुलामी को प्रस्तुत किया है। एक- के- बाद-एक सद्य परिणिता स्त्री धान कूटने का मूसल थाम कर विवश और चुपचाप गृहस्थी में खटती जा रही है। इसी अवसर पर पिरोया गया लोक नृत्य तमाम स्त्रियों के दुःख की तीखी अभिव्यंजना करता है। छछांक की हत्या एक अत्याचारी की हत्या है, जिसको हबीब ने बहुत ही सहज ढंग से प्रस्तुत किया।

नाटक में राजा और छछांक की हत्याओं के प्रसंग भी जबर्दस्त प्रभाव रचते हैं। पहले प्रसंग में छछांक द्वारा की गयी राजा की हत्या अन्यायी और आतंककारी के प्रतीक की हत्या न होकर एक पिता की हत्या है, चूँकि यह हत्या व्यक्तिगत प्रसंग से ऊपर नहीं उठ पायी है। इसलिए आप राजा की हत्या को मंच पर रूपायित होते नहीं देखते हैं, आपको केवल युक्तियों से बता दिया जाता है कि राजा मार दिया जाता है, लेकिन बहादुर कलारिन द्वारा की गयी छछांक की हत्या का पूरा रूपायन हमारे सामने होता है। हम एक-एक क्षण में छछांक को तड़प-पड़पकर मरते हुए देखते हैं, क्योंकि यह एक व्यक्तिगत प्रसंग न होकर अत्याचारी के प्रतीक के हत्या के प्रसंग में बदल गया है।

भाव-वस्तु के रूप में, माँ के प्रति बेटे की आसक्ति, विस्फोटक और त्रासद नाटकीय संभावनाओं से भरपूर होते हुए भी भारतीय जन-मानस के लिए असामान्य और अभूतपूर्व है।

हबीब तनवीर ने इस नाटक के माध्यम से छत्तीसगढ़ी भाषा से सम्पूर्ण देश-विदेश को परिचित करा दिया है। नाटक के रंग-संकेत अभिनेताओं की मनोदशा और मनोदशानुरूप अंग-

---

[53] तनवीर, हबीब; बहादुर कलारिन; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 2004; पृ. 8-9

संचालन को दिशा प्रदान करते हैं। चूंकि इस नाटक की लोक-कथा, भाषा, लोक-नाचा और लोकगीत छत्तीसगढ़ के ही हैं। इसलिए कह सकते हैं कि 'बहादुर कलारिन' का शरीर और आत्मा छत्तीसगढ़ के ही हैं तथा कथा की समस्या मात्र छत्तीसगढ़ की न होकर देशव्यापी है।

हिरमा की अमर कहानी

यह नाटक आदिवासी जनजीवन के इतिहास में उनकी परम्परा और संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हुए आदिवासियों पर होने वाले अत्याचार की एक गाथा है। इस नाटक में तितुर बसना के आदिवासी राजा के माध्यम से आजादी के बाद राजघरानों को मिलाने और इससे जुड़ी समस्याओं को दिखाया है। साथ ही राजनीति के दांवपेंच पर भी इसमें जमकर प्रहार किया है। नाटककार आदिवासी क्षेत्रों में विकास की नीतियों में परिवर्तन का पक्षधर है। *"सरकारी तंत्र में अधिकारियों की शोषण प्रवृति ने यहां के स्वच्छंद विचरण करने वाले आदिवासियों को जंगल अब कारागार की तरह प्रतीत होते हैं। इन्हीं विसंगतियों के विरुद्ध आवाज उठाने वाले 'हिरमा' की निर्मम हत्या को राजनैतिक स्वरूप दिया गया। वास्तविकता इससे भिन्न है। यह जनजातियों के अपने नैसर्गिक जीवन के लिए संघर्ष के साथ ही साथ सरकारी कर्मचारियों, व्यापारियों, एवं अन्य मुनाफाखोरों के विरुद्ध बगावत है।"* [54] आदिवासियों के विकास प्रश्न को उनकी कठिनाइयों और अंतर्विरोध के साथ पूरे तथ्यों को सामने रखते हुए नाटककार ने अपना दृष्टिकोण सामने रखा है।

नाटक की शुरुआत कलेक्टर (सूत्रधार) के प्रवेश से होती है। नाटक की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं, *"ये कहानी आदिवासी रियासत तितुरबसना की है। वहां के महाराज हिरमादेव सिंह गंगबंसी हैं।... मैंने आदिवासी राज में सामंतवाद देखा है। सामंतवाद को ख़त्म करके लोकतंत्र को कैसे स्थापित किया जाये। मैं इस संघर्ष में लग गया। संघर्ष के रास्ते में बहुत*

[54] अग्रवाल, महावीर; छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य: श्री प्रकाशन, दुर्ग, छत्तीसगढ़; संस्करण 1997; पृ. 130

ऊँच-नीच देखी और यही हमारे नाटक का विषय है।" [55]

हिरमा की अमर कहानी एक दुखांत नाटक है, जिसमें आदिवासी जीवन के सामाजिक पहलू हैं। 'हिरमा की अमर कहानी' बेहद पिछड़े इलाकों के आदिवासी लोगों के तथाकथित सरकारी विकास की विसंगतियों तथा सामंतवाद एवं लोकतंत्र के संघर्ष की त्रासदी को दिलचस्प लोक रंग शैली में प्रस्तुत करता है।

इस तरह निर्देशक ने बढ़ी गहराई से इस विषय को समझते हुए एक साथ कई सवाल उठाए गए हैं। *"राजनेता हो या जमींदार या भ्रष्ट अधिकारी वर्ग किस तरफ ये लोग कभी न्याय और व्यवस्था के नाम पर कभी विकास के नाम पर मानवीय मूल्यों की बलि देते हैं इसका सजीव चित्रण हिरमा की अमर कहानी में दिखलाई पड़ता है।"* [56] नाटक में कथानक और भाषा का परस्पर तालमेल बहुत बढ़िया हुआ है। इसमें महत्त्वपूर्ण दृश्यों और घटनाक्रमों के बाद गीत या नृत्य का प्रयोग भी जमकर हुआ है। सम्पूर्ण नाटक में आदिवासी गीतों, नृत्यों की छटा निराली है। इन नृत्यों में मोखपाल (दंतेवाड़ा), रेमाबांड (नारायणपुर), करिहा (कांकेर) दल प्रमुख हैं जिन्होंने रेलो, गौरा, पाटा, विज्जा और बिहाव नृत्य प्रस्तुत किये।

सोन सागर

'बहादुर कलारिन' के बाद हबीब तनवीर ने 'सोन सागर' में छत्तीसगढ़ की लोक शैली चंदैनी की काल्पनिक नायिका चंदा के रूप में फिर एक सशक्त महिला चरित्र को प्रस्तुत किया। पंडवानी शैली के कथा गायक के महाभारत की कथा गाने की तरह चंदैनी का कथा गायक भी कई रातों में अपनी कथा पूरी करता है। मुख्य कलाकार गाता है, कथा सुनाता है और नाचता है। इसके चार-पांच साथी होते हैं, जो विभिन्न वाद्य बजाते हैं तथा गायन में भी मुख्य कलाकार का

---

[55] अग्रवाल, महावीर; हबीब तनवीर का रंग संसार; श्रीप्रकाशन, दुर्ग, छत्तीसगढ़; संस्करण 2006; पृ. 150

[56] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक रंग व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1997; पृ. 70

साथ देते हीं। पंडवानी की तरह यह शैली उतनी लोकप्रिय नहीं है। क्योंकि इसमें महाभारत की कथा नहीं है।

चंदैनी की कथा लौकिक है, मौखिक है और उतनी परिचित नहीं अतः इसमें नाच, गान और संगीत कहानी से अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाते है। सोन सागर लोरिक और चंदा की कहानी है जो छत्तीसगढ़ में चंदैनी और बिहार में लोरिकायन के नाम से प्रसिद्ध है। पहला नाम नायिका चंदा को और दूसरा नाम नायक लोरिक को महत्त्व देता है। अतः एक ही कथा दो क्षेत्रों में भिन्न रूप प्राप्त करती है। छत्तीसगढ़ी चंदैनी में नायिका अधिक शक्तिशाली होकर उभरती है। चंदैनी में नायिका अधिक शक्तिशाली होकर उभरती है।

'सोन सागर' में चंदा यानी नारी द्वारा स्वयं जीवन साथी के अधिकार की बात उठाकर उसे समकालीनता से जोड़ा गया है। चंदा अपने पिता के निर्णय को स्वीकार नहीं करती वरन विद्रोही होती हुई एक स्वतंत्र चेता नारी के रूप में सामने आती है। *"लोरिक के माध्यम से हबीब तनवीर ने यह संकेत दिया है कि जमीन उसकी होनी चाहिए जो उसे जोतता है। सोन सागर के सारे संवाद और गीत हबीब तनवीर जी ने लिखे।"*[57] इस नाटक को हबीब तनवीर अपनी ख्याति के अनुरूप नहीं ढाल पाए। उनके कल्पनाशील मंच-विधान,समृद्ध सांगीतिक शैली, प्रभावी रंग प्रस्तुति और भरपूर मनोरंजन क्षमता का स्वर धीमा पड़ गया। लोरिक चंदा का पुनर्सृजन करते हुए हबीब ने अनेक गीतों के माध्यम से कथा को कसने का प्रयास ज़रूर किया है। समूची प्रस्तुति मे दूसरे सूत्र और स्थितियों का प्रयोग तो उन्होंने शानदार तरीके से किया है परन्तु ये स्थितियां लोरिक-चंदा की प्रेमगाथा पर हावी हो गई।

हबीब तनवीर का मुख्य आधार चंदैनी था तथापि उन्होंने उसमें बहुत अधिक संपादन किया था। उन्होंने कहानी के ग्राम्य तत्त्वों को प्रमुखत दी थी। इसमें जादू तथा अलौकिक कथाओं

---

[57] अग्रवाल, महावीर; छत्तीसगढ़ी लोकनाट्य: नाचा; श्री प्रकाशन, दुर्ग, छत्तीसगढ़; संस्करण 1997; पृ. 199

को छोड़ दिया था। सोन सागर गौरा के राजा मौहर की भैंस है जो सुनहले बछड़ों को जन्म देती है। एक बार बारह भैंस चोरी करके ले जाया जाता है और कथैल का लड़का बछड़ों को छुड़ाता है। राजा मौहर बदले में कथैल और खुलना की संतान से अपनी संतान का विवाह करने का वचन देते हैं। कथैल और खुलना का एक बेटा है लोरिक और मौहर के एक बेटी है चंदा, लेकिन मौहर अपना वचन भांग करके अपनी बेटी का विवाह कथैल और खुलना के एक अमीर रिश्तेदार गढ़रेओना के राजा बौरेया के बेटे बावन के साथ करना तय करते हैं। चंदा इस विवाह को अस्वीकार करती है और जब एक शाप के कारण बावन के कोढ़ी हो जाने पर उसकी जगह लोरिक गौना करने आता है तो वह लोरिक के साथ भाग जाने का निर्णय लेती है। बावन शाप से मुक्त होकर ठीक हो जाता है और तब जंगल-जंगल, शहर-शहर प्रेमी युगल को मार डालने के इरादे से ढूंढता फिरता है। लेकिन चंदा की लगन और लोरिक के सौतेले भाई की बहू की सहायता के फलस्वरूप दोनों बच जाते हैं और सुख से जीवन बिताते हैं।

हबीब तनवीर ने अपना यह नाटक श्रीराम सेंटर के तलकक्ष में खेला जो उनके अधिकांश अन्य नाटकों की तरह छत्तीसगढ़ी बोली में ही था। नेमिचंद जैन लिखते हैं, *''नाटक का कथानक उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश में लोकप्रिय लोरिक और चंदा की प्रेमगाथा से लिया गया था, जिसके गीतों में टिप्पणी द्वारा अथवा कथा या चरित्रों में किसी विशेष पक्ष पर ज़ोर देकर समकालीन प्रासंगिकता लाने की कोशिश भी की गई है। कथा अपने में बड़ी आकर्षक है और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उसका बड़ा ही मनोहारी और प्रभावपूर्ण उपयोग अपने उपन्यास पुनर्नवा में किया है। हबीब तनवीर ने अपना नाट्यालेख छत्तीसगढ़ी क्षेत्र में लोकप्रिय गाथा-गायन चंदैनी के आधार पर तैयार किया है। बल्कि बीच-बीच में कथा को जोड़ने या टिप्पणी के लिए चंदैनी गाथा-गायन के ही कुछ टुकड़ों का इस्तेमाल किया गया है और कुछेक गीतों की धुनें भी चंदैनी की ही है।''* [58]

[58] जैन, नेमिचंद; तीसरा पाठ; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; संस्करण 1998; पृ. 25

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि हबीब तनवीर की ख्याति का मुख्य आधार लोक शैलियों, लोक कथाओं से जुड़े हुए ये तमाम नाटक रहे हैं। हबीब तनवीर की इस पहल के कारण ही हिंदी रंगमंच पर लोक की इस नई प्रवृति ने कदम रहा। अपने रंगकर्म की शुरुआत से लेकर अंत तक हबीब तनवीर लगातार लोक शैलियों के माध्यम से विभिन्न प्रयोग करते रहें।

3.4 अनुदित / रूपांतरित नाटक

हबीब तनवीर के मौलिक और आधारित नाटकों के बाद उनके अनुदित या रूपांतरित नाटकों का स्थान आता है। रूसी नाटक 'दी फेमिनिन टच' का भारतीय रूपांतर 'जालीदार पर्दे' उनका पहला रूपांतर है, जो सन 1952 में बंबई में खेला था। एक अंग्रेजी एकांकी पर आधारित 'फांसी', मोरियर के 'बुर्जुआ जेंटलमैन' पर आधारित 'मिर्जा शोहरत बेग' (1959) जो बाद में 'लाला शोहरत राय' के नाम से छत्तीसगढ़ी बोली में रूपांतरित किया गया। बर्तोल्ट ब्रेख्त के 'दी गुड परसन ऑफ सेतजुआन' का रूपान्तर 'शाजापुर की शांतिबाई' (1978) और गोगोल के 'दी गवर्नमेंट इंसपेक्टर' का रूपांतर 'शाह बादशाह' (1980) आदि उल्लेखनीय है। यद्यपि ये सभी रचनाएँ नाटक थीं पर हबीब ने अनुवाद न करके उनका भारतीय रूपान्तर किया। *"ये रूपान्तर अनुवाद के निकट होते हुए भी अनुवाद नहीं हैं, क्योंकि इनमें थोडा हेर-फेर किया गया, ऐसा करने में ही हबीब का मौलिक योगदान था।"* [59] हबीब तनवीर ने प्रेमचंद की प्रसिद्ध कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' का रूपान्तर 'शतरंज के मोहरे' के नाम से किया। यह उनके द्वारा रूपांतरित और निर्देशित पहला रंगमंचीय नाटक था, जिसमें उन्होंने सूत्रधार की भूमिका निभाई। यह उनके अंतर्मन के प्रशिक्षण का दौर कहा जा सकता है, *"जिससे गुजरने पर उनके मन में एक निजी मुहावरे की तलाश की भूख जागी।"* [60]

---

[59] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक रंग व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1997; पृ. 105

[60] शुक्ल, प्रयाग (सं.); रंग प्रसंग; जुलाई-सितम्बर, 2004; पृ. 16

संस्कृत नाटकों के रूपांतर, अनुवाद और प्रयोगात्मक प्रदर्शनों द्वारा प्राचीन नाट्य-परम्परा का पुनरुथान बहुत ही उपयोगी था। समसामयिक रंगमंच कलाओं का प्राचीन परम्परा के साथ पुनः नया सम्पर्क स्थापित होने पर हमारे नए रंगमंचीय नवोत्थान आन्दोलन को बहुत बड़ी शक्ति मिली।... हबीब ने संस्कृत नाटक मृच्छकटिक का अनुवाद हिंदी में 'मिट्टी की गाड़ी' के नाम से किया। इसके अतिरिक्त भवभूति का 'उत्तररामचरित' तथा भास के तीन नाटक 'दुतवाक्यम्', 'पंचरात्रम्' और 'उरूभंगम्' को मिलकर एक साथ भासत्रयी को छत्तीसगढ़ी में रूपांतर कर उसे प्रस्तुत किया। *'' संस्कृत के नाटक ने हबीब जी को शुरू से ही आकृष्ट करते रहे, क्योंकि संस्कृत नाटकों की नाट्यधर्मी शैली और लोकनाट्य शैली में उन्हें अद्भुत समानता दिखलाई दी।''*[61]

आज भी संस्कृत नाटकों के मंचन की समस्या का समाधान लोकनाट्य-रूढ़ियों के माध्यम से सहज ही हो सकता है। इस दृष्टि से हबीब का 'मिट्टी का गाड़ी' इसका सशक्त उदाहरण है।

मिट्टी की गाड़ी

सन् 1958 में हिन्दुस्तानी थियेटर के लिए प्रस्तुत किया गया यह नाटक संस्कृत के प्रसिद्ध नाटक 'मृच्छकटिक' का नाट्य रूपांतर था। इसमें "निर्देशक के वक्तव्य के अनुसार पश्चिम की नाट्य-प्रदर्शन की अनेक रुढियों और लोकनाट्य–परम्पराओं से आने वाली रूढ़ियों और रंगमंच–व्यवहारों का सामंजस्य प्रस्तुत किया गया था।"62 जब हबीब अपनी यूरोप की यात्रा पर थे तब भी उन्होंने इस नाटक को विदेशी भाषाओं में प्रस्तुत करने के लिए काफी प्रयास किये जिसमें सफलता नहीं मिली। यूरोप की यात्रा से लौटने के बाद हबीब ने अपनी इस पहली प्रस्तुति में अनेक प्रयोग किए। चूँकि आंचलिक कलाकारों की सहजता और अभिनय क्षमता

---

[61] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक रंग व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1997; पृ. 83

[62] अवस्थी, सुरेश; हे सामाजिक; वाणी प्रकाशन, संस्करण- 2002; नई दिल्ली; पृ. 122-123

का आस्वाद तो उन्हें 'आगरा बाज़ार' में ही मिल चुका था, इसीलिए अपने उस अनुभव के आधार पर हबीब ने इस नाटक में छत्तीसगढ़ के छह लोक कलाकारों को पहली बार मंच पर उतरा था। इस नाटक के लिए उन्होंने गाने नियाज हैदर से लिखवाये और धुनें अधिकतर छत्तीसगढ़ी लोक की इस्तेमाल की थी। परन्तु अभिजात्य वर्ग और संस्कृत रंगकर्मी और आलोचकों द्वारा नाटक पर कई कटाक्ष किये गए हैं।

'मिट्टी की गाड़ी' के प्रथम प्रदर्शन से तनवीर ने यह सबक लिया कि प्रचलित रंग-पद्धतियों के मिश्रित स्वरूपों के समन्वय का प्रयोग कैसे नहीं किया जाना चाहिए। अपने यूरोपीय रंगनुभावों को वे साथ लेकर आए थे। उनके मन में यह तो निश्चित था कि अपने मुहावरे के लिए उनकी अपनी जमींन ही उन्हें शक्ति देगी, लेकिन इसके बावजूद भी आधुनिक रंग-तकनीकों का उनके मानस पर कुछ तो प्रभाव पड़ा ही था। रंग-पद्धतियों के मिश्रित रूपों के प्रयोग से यह नाटक किसी एक निश्चित शैली का समन्वित आस्वाद देने में विफल हो गया। लेकिन अपनी विफलताओं का वे स्वयं मूल्यांकन करते रहे, बार-बार उन कारणों को खोजते रहे जो दर्शकों और अभिनेताओं की दृष्टि से उनकी प्रस्तुतियों की सफलता में बाधक रहे।

इस नाटक के कलाकारों के चयन की प्रक्रिया भी बड़ी रोचक रही। हबीब तनवीर जब 1958 में यूरोप से वापस आये तो 'मृच्छकटिक' शुरू करने से पहले वह अपने परिवार से मिलने के लिए रायपुर गए थे। वहां हाईस्कूल (जहाँ से उन्होंने शिक्षा पाई थी) के मैदान में 'नाचा' होने वाला था। उन्होंने पूरी रात नाचा देखा जो कि सामान्यतः नाचा की प्रस्तुति की अवधि है। उन्होंने अपने दल के छह सदस्यों के रूप में लोक कलाकारों को भर्ती कर लिया। ये छह लोग दिल्ली आए और इन्होंने 'मिट्टी की गाड़ी' में भाग लिया।

नाट्य पाठ के संदर्भ में बात करें तो संस्कृत नाटककार शूद्रक ने भास के 'दरिद्र चारुदत्त' की मूल कथा में शर्विलक की दिलचस्प कहानी जोड़कर इस नाटक को एक नया रूप प्रदान किया

था। अब इसमें एक तरफ चारुदत्त और बसंत सेना की प्रेम कथा है और दूसरी तरफ अत्याचारी राजा पालक के विरुद्ध शर्विलक का राजनैतिक आन्दोलन। नाटक के आखिर में दोनों ही कामयाब होते हैं। नाटक में घटनाएँ सहज रूप से आगे बढ़ती जाती है तथा संवेदनशील आदमी को आज के हालत की सच्चाइयों की भी झलक प्रत्येक दृश्य में मिलती है।

'मिट्टी की गाड़ी' के सभी प्रदर्शन पक्षों को यदि अलग-अलग ले तो हम देखते हैं कि नाट्यधर्मी और लोकधर्मी दोनों ही प्रकार की परम्पराओं की बहुत बड़ी अवहेलना इसमें की गई है। पात्र तरह-तरह की विचित्र वेशभूषा में प्रस्तुत किए गए हैं। वे घाघरे, लहंगे, धोतियों में आते हैं। सूत्रधार तो ओवरकोट पहने हुए पाईप पीता हुआ नाट्य प्रदर्शन की सूचना देता है। वेशभूषा के चुनाव और उसके प्रयोग में किसी तरह का विवेक और व्यवस्था नहीं है। अनेक शैलियों का यह मिला जुला रूप निर्देशन के सभी पक्षों में व्यक्त हुआ है, जिससे पूरे प्रदर्शन में किसी प्रकार की रूप और शैलीगत एकता नहीं आ सकी।

इस नाटक को देखने के बाद जयदेव तनेजा का विचार भी कुछ ऐसा ही है। वे लिखते हैं, *''बात लगभग मन से उतर गई थी और शायद किसी भी नाटक के अनुवाद का उत्साह फिर मन में न आता, यदि कुछ वर्ष पहले दिल्ली के रंगमंच पर मिट्टी की गाड़ी नाम से मृच्छकटिक का अभिनय न केवल देखा होता। हबीब द्वारा प्रस्तुत उस नाटक में जहाँ प्रयोग और शिल्प की दृष्टि से कई विशेषताएँ थीं, वहां उसकी सबसे बड़ी सीमा थी- अनुवाद की पांडुलिपि, जो शायद एक अंग्रेजी अनुवाद के आधार पर तैयार की गई थी।''*[63] यह सही है कि इस नाटक की प्रथम प्रस्तति असफल रही क्योंकि हिंदी के संवाद अनपढ़ ग्रामीणों कलाकारों की जबान से कुछ अच्छा नहीं लगा। लेकिन बाद में तो हबीब तनवीर ने अपने अनुभवों के आधार पर इस नाटक में अनेकानेक परिवर्तन किए।

---

[63] तनेजा, जयदेव; नाट्य-विमर्श; तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2017; पृ. 80

बाद के प्रदर्शनों में पूरा का पूरा नाट्य दल ही छत्तीसगढ़ी कलाकारों का था। वसंतसेना जैसी राज नर्तकी की भूमिका के लिए भी किसी शास्त्रीय नृत्यांगना की बजाय फ़िदा बाई को लिया गया। नाटक की भाषा को भी हिंदी के स्थान पर छत्तीसगढ़ी कर दिया गया, जिसमें आंचलिक अभिनेता पूरी सहजता और क्षमता के साथ अभिनय करने लगे। इस प्रकार यह नाटक जीवंत हो उठा। दर्शक वर्ग ही नहीं देश के वरिष्ठतम संस्कृत रंगकर्मियों ने भी इस प्रस्तुति की काफी प्रशंसा की। जैसे डॉ. कमलेश दत्त त्रिपाठी ने कहा कि-

"संभवतः हिंदी भाषी क्षेत्र में पहली बार ऐसा प्रयोग रंग-निर्देशक हबीब तनवीर ने किया। सन 1957-58 में 'मृच्छकटिक' के रूपान्तर को लोक रंगशैली के मुहावरे में ढाल कर की गई उनकी प्रस्तुति संस्कृत नाटक और पारम्परिक रंगशैली के सामंजस्य का नया प्रयोग था। तनवीर का 'मृच्छकटिक' पर आधारित यह प्रयोग बाद के दशकों में भी जारी रहा और छत्तीसगढ़ी में 'मृच्छकटिक' का यह रूपांतर छत्तीसगढ़ की नाचा लोक रंगशैली तथा लोक संगीत के उपयोग से, संस्कृत नाटक के पुनराविष्कार का एक अत्यंत सार्थक समकालीन प्रयास रहा है।"[64]

कुल मिलकर कह सकते हैं कि नाटक 'मिट्टी की गाड़ी' से हबीब तनवीर का बहुत बड़ा प्रयोजन सिद्ध हुआ। संस्कृत नाटकों को मंचित करने की जिस प्रणाली को उन्होंने अन्ततः खोज निकाला, यह प्रस्तुति उनकी पहली सीढ़ी थी।

मुद्राराक्षस

'मिट्टी की गाड़ी' के बाद हबीब को बेगम जैदी ने अपने नाटक कंपनी से निकाल दिया था। बेगम जैदी मिट्टी की गाड़ी के बाद विशाखदत्त के संस्कृत नाटक मुद्राराक्षस की प्रस्तुति चाहती थी। लेकिन हबीब का मानना था कि यह एक कठिन नाटक है और उसको करने के लिए

---

[64] भार्गव, भारतरत्न; रंग हबीब; राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली; संस्करण 2006; पृ. 68

निर्देशक के रूप में और आगे के 5 साल का अनुभव चाहिए। बाद में हबीब ने इस नाटक को किया। 'मुद्राराक्षस' का पी. लाल द्वारा किया गया अंग्रेजी अनुवाद 'द सिग्नेट रिंग ऑफ मुद्राराक्षस' को हबीब तनवीर ने सबसे पहले 1965में अंग्रेजी भाषा में निर्देशन किया। 1968 में इस नाटक की फिर पुनर्प्रस्तुति की गई थी। हबीब तनवीर ने फिर काफी बाद में (1998) इसे हिंदी में अनुदित कर खेला और सफल हुए।

देख जाए तो यह नाटक पूरे तौर पर न दुखांत है और न ही सुखांत। इस नाटक की मूल कथा में यह है कि महानन्द भरे दरबार में चाणक्य का अपमान करता है और चाणक्य सम्पूर्ण नन्द वंश के विनाश का प्रण करता है। अपना प्रण पूरा करने के बाद चाणक्य चंद्रगुप्त मौर्य को मगध के राज्य सिंहासन पर स्थापित कर देता है। लेकिन राक्षस, जो महानंद का वफादार मंत्री रह चुका था, आसपास के राजा महाराजाओं से मिलकर पाटलीपुत्र पर चढ़ायी कर देने की ठान लेता है। चाणक्य यह नहीं चाहता कि राक्षस हाथ से निकल जाए वो उसे चन्द्रगुप्त का मंत्री बनाकर खुद इस पदवी से हट जाना चाहता है। क्योंकि उसकी नजर में चन्द्रगुप्त को राज्य के संचालन के लिए राक्षस से बेहतर मंत्री नहीं मिल सकता था। उसके सामने मसला यह था कि राक्षस को चन्द्रगुप्त से मिला भी दें और उसे अपमानित भी महसूस न होने दें। वो युद्ध की भूमिका बनाये रखता है और अपने जासूसों के माध्यम से इस कठिन मुहीम में सफल होता है।

'मुद्राराक्षस' राज्य निर्माण जैसे विशुद्ध राजनीतक विषय पर लिखे इस नाटक का कथानक गुप्तचर और उनकी साजिशों पर आधारित है। भेदियों की डबल क्रासिंग को सहजतापूर्वक समझाने के लिए हबीब तनवीर ने जो पद्धति अपनायी है वह बड़ी दिलचस्प है। एक राज्य का गुप्तचर जब दूसरे राज्य में अपने ही राज्य का भेद बताते लगता है तो उस समय अपने चोगे को उलट कर पहनता है। हबीब लिखते हैं कि *''मैंने जब नाटक को पढ़ा तो मैं सम्मोहित हो गया। एक अद्वितीय राजनैतिक नाटक मैं पहले पाठ में उसकी कथावस्तु को समझ नहीं सक। मैंने गुप्तचरों को*

अलग-अलग करके समझने के लिए उसे दुबारा पढ़ा, क्योंकि इस बात को जान लेना कठिन है कि कौन किसकी जासूसी कर रहा है, यह बहुत उलझन भरा है। यह पूरे नाटक में चलता रहता है।... मैंने जब उसे प्रस्तुत किया तो क्या चल रहा है उसको समझाने के लिए एक पद्धति सोच निकाली। मैने दो प्रतीक चुने एक चाणक्य के लिए, एक राक्षस के लिए और दो रंग भी और मैंने जासूसों को दो रंग के परिधान दिए। तो वे खास रंग के पहनावे और खास प्रतीक के साथ आएंगे और आप देख लेंगे कि यह चाणक्य का आदमी है और ठीक आपके सामने वह अपने चोंगे को उलट देगा और उस दूसरे रंग को पहन कर दिखाने से आप समझ जाएंगे कि उसने अपना पाला बदल लिया है। तो यह युक्ति थी जो मैंने उसे सुबोध बनाने के लिए निकाली।'' [65]

लाला सोहरत राय

यह नाटक प्रख्यात फ्रांसीसी लेखक मौलियर के 'बुर्जुआ जेंटलमैन' का छत्तीसगढ़ी रूपांतरण था जिसे हबीब तनवीर ने पहले 'मिर्जा शोहरत बेग के नाम' से मंचित किया गया था। जमाने की अंधी दौड़ में शामिल व्यक्ति की हास्यास्पद स्थिति को बिंबित करता हुआ यह नाटक ऐसे वर्ग पर व्यंग्य करता है जो निपट धनी होने के कारण सब कुछ सीख या पा लेना चाहता है।

नाटक का कथानक लाला के इर्द-गिर्द घूमता है। नाटक में शोहरत राय एक कपड़े बेचने वाला छत्तीसगढ़ी बनिया है जो शहर के बड़े लोगों की नकल में छत्तीसगढ़ी भाषा छोड़कर हिंदी की खड़ी बोली और अंग्रेजी सीखता है। साथ ही संगीत, नृत्य और मार्शल आर्ट्स भी सीखने का प्रयत्न करता है। धोती कुर्ता छोड़कर सूट पहनता है और बेटी की शादी शहर के किसी ऊँचे क्लास के लड़के से करना चाहता है। मिस्टर खन्ना एक चलता पुरजा आदमी है। वह लाला शोहरत राय की इन कमजोरियों से फायदा उठाकर उनसे पैसा भी लूटता है और शहर की एक चालू औरत को कांकेर की राजकुमारी बताकर उसे उनके लिए भिड़ाने का भी वादा करता है।

---

[65] तनवीर, हबीब; 'ए लाइफ इन थियेटर'; प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 38-39

साथ ही यह भी वादा करता है कि मुख्यमंत्री से कहकर उन्हें पद्मश्री की पदवी दिलवा देगा।

इन सब चीजों को देखकर लाला शोहरत राय की पत्नी भी परेशान है और उनकी बेटी विमला भी, जो गाँव के एक लड़के कामता प्रसाद से प्रेम करती है। तख्ता पलटता है घनऊ, जो शोहरत राय की नौकरानी कचरी को चाहता है, वह एक नाटक रचाता है जिसमें गाँव के दूसरे एक्टरों के साथ मिलकर शोहत राय को एक अजीबों गरीब तुर्की पदवी 'मामा मोशी' पेश करता है। इसके साथ-साथ कामता प्रसाद को एक तुर्की शहजादे के भेष में और अपने आप को शहजादे के नौकर के भेष में शादी के लिए प्रस्तुत करता है। लालाजी विमला और कचरी का ये प्रस्ताव मंजूर कर लेते हैं। उसी मजिस्ट्रेट से मिस्टर खन्ना राजकुमार के साथ अपना ब्याह रचा लेते हैं। अंत में ऐसा कोई नहीं रह जाता जिसके दिल में कोई मलाल हो, सब ख़ुशी से फूल उठते हैं।

हबीब तनवीर ने इस विषय को भी अपने संस्कारों में ढाल लिया। उन्होंने यह नाटक भी लोक कलाकारों के माध्यम से छत्तीसगढ़ी बोली में प्रस्तुत किया। वास्तव में यह नाटक नवधनाढ्य वर्ग की बौद्धिक दरिद्रता, अहंकार और छिछलेपन पर तीव्र प्रहार करता है।

रुस्तम सोहराब

यह नाटक उर्दू के प्रख्यात नाटक लेखक आगा हश्र कश्मीरी ने लिखा है। आगा हश्र कश्मीरी कला के प्रति शास्त्रीय दृष्टिकोण रखने वाली संवाद अदायगी तथा पात्रों के निपुण चित्रण शैली का प्रतिनिधित्व करते हैं और यह शैली उन्होंने विलियम शेक्सपीयर से सीखी। देखा जाए तो यह नाटक ईरान और तुरान की दुश्मनी पर आधारित है। इसमें ईरान का मशहूर सरदार रुस्तम शिकार खेलते हुए तूरानी की सीमा पर पहुँच जाता है और तूरानी के सिपाही रुस्तम के घोड़े को चुरा लेते हैं। घोड़े की खोज में रुस्तम तूरानी के राज दरबार में पहुँचता है और दरबार में तूरानी के बादशाह को ललकारता है।

रुस्तम की बहादुरी पर शाहे समनगान की लड़की तहमीना फिदा हो जाती है। शाहे समनगान चुपके से दोनों का विवाह कर देता है। विदा होते समय रुस्तम तहमीना को एक मोहर देता है कि अगर लड़का पैदा हो तो उसके बाजु पर बांध कर ईरान भेज देना। रुस्तम के लड़का सोहराब पैदा होता है, लेकिन तहमीना उसे ईरान नहीं भेजती है। सोहराब का पिता ईरान का सरदार है। यह बात जब तूरानी के बादशाह को पता चलती है तो बादशाह सोहराब को मारने की कोशिश करता है। इस नाटक कि प्रस्तुति में हबीब ने पारसी शैली का प्रयोग किया था। *"निर्देशक हबीब तनवीर द्वारा ही कहानी की प्रस्तुति अपने आप में उनकी प्रखर प्रतिभा थी जो अनेक नकचढ़े दर्शकों को भी खुश कर गयी।"*[66]

शतरंज के मोहरे

प्रेमचंद की कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' का नाट्य रूपांतर 'शतरंज के मोहरे' नाम से हबीब तनवीर ने किया और दिल्ली में इसका प्रदर्शन किया। *"शतरंज के मोहरे (1948) एक मात्र ऐसा नाटक है जो मुंशी प्रेमचंद जैसे कुशल कथाकार की कहानी 'शतरंज के खिलाड़ी' पर आधारित है।"*[67] इस नाटक में हबीब तनवीर ने उर्दू भाषा का प्रयोग किया। हबीब लिखते हैं, *"पहले मैं जैसे शतरंज के मोहरे कर रहा था तो न सिर्फ लखनवी जबान लिखने की मैंने कोशिश की बल्कि लखनवी एक्टरों को पकड़ने की कोशिश की, चुनांचे लखनवी एक्टर मुझे मिला और उनका लंबा-लहजा मुझे उनको सिखाना नहीं पड़ा। ... तो वह लुफ्त मुझे इसलिए अब नहीं आ सकता है कि अब मुझे वैसे एक्टर नहीं मिलते हैं। एक तरफ तो उर्दू जबान को जो नुकसान पहुंचा है उसकी वजह से आज के बच्चे अगर उर्दू बोल भी रहे हैं तो वो वह लिटरेरी उर्दू नहीं है। उनके भाव नहीं जानते हैं, तेवर नहीं समझते हैं। उसके नुकात से वाकिफ नहीं हैं और लहजे में फर्क आ गया है।"* [68]

---

[66] प्रसाद, प्रो. कमला (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 265

[67] अग्रवल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1997; पृ. 103

[68] अलखनंदन; 'अपने दिल से सच्ची बात लिखिये'; प्रो.कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 69

देख रहे हैं नैन

यह नाटक स्टीफन ज्वाइंग की कहानी 'द आईज ऑफ एन अनडाइंग ब्रदर' पर आधारित है। इस कहानी ने नायक के अंदरूनी नैतिक संघर्ष की वजह से तनवीर को खींचा। नायक महान योद्धा है और उसे अपने ही भाई की हत्या करनी है, लेकिन हबीब जी नाटक लिखते समय मूल कथा से परे गए। उन्होंने बहुत सी घटनाएँ, पात्र, स्थितियां जोड़ी जो नाटक को अधिक सम्पन्न बनाते हैं। *''इस प्रक्रिया का ही नतीजा है कि पूरा नाटक एक जटिल रचना संसार रचता है जिसमें एक तरफ भीतरी शांति की लगभग दार्शनिक खोज है तो दूसरी तरफ रोज की भौतिक समस्याएँ भी हैं... एक तरफ इन सभी तुच्छ चीजों को छोड़ने की इच्छा है तो दूसरी तरफ इनके विरुद्ध लड़कर आम आदमी की जिंदगी बेहतर बनाने की अभिलाषा भी है।''*[69]

इस नाटक की कथा में चन्दनपुर का वफादार नागरिक विराट राजा विजय देव के राज को कठिन समय में दुश्मनों के हमले से बचा लेता है। लेकिन इस युद्ध में अनजाने में वह अपने भाई की हत्या कर देता है। इस भाई की आँखें सारी जिन्दगी विराट का पीछा करती रहती हैं। नाटक की कहानी में राजा उसे सेनापति बनाना चाहता है लेकिन विराट तलवार को दोबारा हाथ लगाने से मना कर देता है। फिर राजा उसे देश का प्रधान न्यायाधीश बना देता है। छह साल बाद एक कातिल को ग्यारह साल की सजा देते वक्त वह देखता है कि कातिल की आँखें उसके भाई ही की आँखों की तरह विराट पर कत्ल का इल्जाम लगा रही हैं। वह राजा से विनती करता है कि उसे इजाजत दी जाए कि वो आइन्दा कोई काम न करे।

राजा उसे इजाजत दे देता है लेकिन फिर छह वर्ष बाद जब उसका बड़ा बेटा अपने एक दास को मार-मारकर लहुलुहान कर देता है तो विराट फिर देखता है उस दास की आँखें भाई की

---

[69] मलिक, जावेद; 'हबीब तनवीर एक गाथा पुरुष'; प्रो. कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता, अंक 103, 2003; पृ. 146-147

आँखों की तरह शिकायत कर रही हैं। वह दुनिया त्याग कर साधु बन जाता है। यहां भी वह उन आँखों से मुक्त नहीं हो पाता है और राजा से एक अदना से अदना काम मांगता है। उसका मानना है कि सेवा से ही मुक्ति है, बाकि सब कामों का अंजाम दूसरों के लिए बुरा होता है। तब राजा गुस्से में आकर उसे चांडालों का काम करने को कहता है। विराट ख़ुशी ख़ुशी श्मशान में चिताएं जलाने का काम करता है। तभी कुछ दिनों बाद शहर में प्लेग फैल जाती है और साथ ही जनता राजा के खिलाफ बगावत कर उसे मार देती है। विराट जो खुद प्लेग का शिकार हो चुका था राजा की लाश श्मशाम भूमि में ले जाते वक्त खुद ढेर हो जाता है। इस तरह नाटक का अंत होता है। देखा जाए तो देख रहे हैं नैन भी एक ट्रेजडी है।

कामदेव का अपना बसंत ऋतु का सपना

शेक्सपीयर के अंग्रेजी नाटक 'मिड समर नाइट्स ड्रीम' का हबीब तनवीर द्वारा भारतीय शैली में किया गया यह नाट्य रूपांतरण है। सपना नाटक का कथानक अभिनय की रम्य शैली और मधुर गीतों के साथ विकसित होता है। हबीब ने इसके लिए जो गीत गीत लिखे थे, उनमें वे शेक्सपियर की कविता की जटिल चित्रात्मकता और ब्रेख्त के अति यथार्थवादी विचारों को पूरी तरह साकार करते हैं। इन गीतों में आधुनिक चेतना का नयापन है तो दूसरी ओर लोक परम्परा और शैली का ठेठपन है। गीतों की अधिकांश धुनें लोक संगीत पर आधारित हैं। छत्तीसगढ़ में एक विशेष प्रकार का बांस होता है जिसका वाद्य के रूप में प्रयोग किया जाता है। कथा बांस और गीत के साथ-साथ चलती है जिसे बांस गीत कहते हैं। इसका प्रयोग हबीब ने इस नाटक में किया था।

इस नाटक में ड्यूक थिसियस की हिपोलाइटा से होने वाली शादी के अवसर पर कुछ मजदूर और कारीगर एक नाटक करने की ठान लेते हैं। नाटक की रिहर्सल करने के लिए वे सब एक जंगल में पहुँच जाते हैं और यहां एक दूसरी कहानी शुरू होती है। जंगल का राजा ऑबरान, जो अपनी पत्नी टाइटानिया से एक बच्चे के विवाद को लेकर खिन्न है, अपने सेवक से एक फूल

मंगवाकर उसका रस टाइटानिया की आँखों में सोते वक्त छिड़क देता है। इसके असर से वो जागने पर सबसे पहले जिसे देखेगी उस पर मोहित हो जायेगी।

इस बीच वह सेवक रिहर्सल के दौरान नाटक के नायक बॉटम का सर गधे के सर से बदल देता है। इस जादू से डर कर बाकी सब कलाकार भाग जाते हैं। टाइटानिया जागने पर सबसे पहले इसी गधे को देखती है और उस पर मोहित हो जाती है। इस तरह जंगल का राजा रानी से वह बच्चा ले लेता है। फिर टाइटानिया की आँखों से यह असर दूर किया जाता है और बॉटम के सर से गधे का सर। इस तरह आखिर में ड्यूक के दरबार में प्रेमस और थिसवी की ट्रेजडी कारीगर कलाकार कुछ इस अंदाज से पेश करते हैं कि शायद इससे बेहतर कोई कॉमेडी हो ही नहीं सकती थी।

सात पैसे

यूरोप महाद्वीप के एक देश चेक कि कहानी का नाट्य-रूपांतर हबीब तनवीर ने 'सात पैसे' नाम से किया। इसमें एक अन्यंत निर्धन बालक द्वारा साबुन की बट्टी खरीदने के लिए सात पैसे जुटाने का कथानक दिखाया गया है। *''बच्चा एक रेल कामगार का लड़का था और वह साबुन की बट्टी खरीदने के लिए सात पैसे इकट्ठे करने की कोशिश कर रहा है। माँ बच्चे के साथ खेलती है और बड़े काव्यात्मक रूप में पैसे की बातें करते हुए पैसे को एक तितली के रूप में वर्णित करती है जिसे वे पकड़ेंगे और उन्होंने सारे कोनों में यहाँ वहां झाँका और एक-एक करके पैसे इकट्ठे करते गए। अंत में माँ को खून की उल्टियाँ हो रही हैं और वह मर जाती है। उस भुरभुरे एकांकी में पुराने थियेटर उस्ताद मास्टर चम्पालाल ने अभिनय किया था।''*[70]

[70] तनवीर, हबीब; 'ए लाइफ इन थियेटर'; प्रो.कमला प्रसाद (सं.); कलावार्ता; अंक 103, 2003; पृ. 39

भारत रत्न भार्गव इस नाटक के बारे में लिखते हैं, *''तितलियों को पकड़ने की कोशिश को एक-एक पैसा जमा करने की मश्क्कत के रूप में प्रदर्शित करने में कल्पनाशीलता और भाव-प्रवणता की अधिकता है।''* [71]

दुश्मन (दी एनेमीज)

सन् 1906 में मैक्सिम गोर्की द्वारा लिखित 'दी एनेमीज' का 'दुश्मन' नाम से रूपांतरण सफ़दर हाशमी ने किया। सफ़दर का यह नाटक उनकी मृत्यु के बाद उनके कागजों में मिला। इस नाटक में न केवल मजदूर और मालिक के बीच के संघर्ष को चित्रित किया गया है वरन स्वयं मालिकों के बीच दिखलाई पड़ने वाले मत-मतान्तरों को भी उभारा गया है। एनएसडी रंगमंडल के प्रशिक्षित कलाकारों और नया थियेटर के लोक कलाकारों को एक साथ मंच पर उतारकर हबीब ने एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया। वैसे देखा जाए तो इस नाटक में दोनों तरह के कलाकारों का समन्वय आसान था। शहरी पात्रों की भूमिका में एनएसडी के कलाकारों ने तथा मजदूरों और कोरस के रूप में लोक कलाकारों ने अभिनय किया। इस नाटक की *''प्रस्तुति में मंच-सज्जा सामान्य थी। सारा क्रियाकलाप कुँवर शीतपाल सिंह के घर में घटित होता है, केवल अंत में कचहरी के दृश्य में परिवर्तन होता है।''*[72]

सौ साल से भी पहले लिखा गया यह नाटक आज भी प्रासंगिक लगता है। गोर्की के इस कथ्य को कि मालिक चाहे कठोर हो या नम्र सुधारवादी, परिणाम एक ही होगा। दोनों ही मजदूरों के अधिकारों को दबाना चाहेंगे। चूँकि मजदूर और मालिकों के स्वार्थ भिन्न-भिन्न हैं। अतः वे कभी एक नहीं हो सकते' को सफ़दर हाशमी ने रूपांतर में बड़ी खूबसूरती से समाहित किया है। नाटक के कथ्य और घटनाओं को भारतीय परिवेश में सफदर मूल नाटक के निकट बने रहे।

---

[71] भार्गव, भारत रत्न; रंग हबीब; राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, नई दिल्ली; संस्करण 2006; पृ. 214

[72] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर एक रंग व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1997; पृ. 76

भारतीय स्थितियों और घटनाओं के माध्यम से उन्होंने मूल नाटक की आत्मा को प्रस्तुत किया। *"निर्देशक हबीब तनवीर ने आलेख में विशेष परिवर्तन नहीं किये सिवाय इसके कि उन्होंने उसमें पांच गीत जोड़े। स्वरचित गीतों को उन्होंने रवीन्द्र संगीत, नजरुल गीति और रूस की अक्तूबर क्रांति के गीत के स्वरों पर गवाया। तथापि मूल आलेख अपने आप में बरकरार रहा।"*[73]

बाघ

नाटक 'बाघ' एक बंगाली वन एक्ट प्ले है जिसे कवि-नाटकार सिसिर कुमार दास ने लिखा है। इन नाटक को हिंदी में हबीब तनवीर, श्रीमति विजया चौबे और डॉ. रंजीत साह द्वारा अनुवादित किया गया हैं। देखा जाए तो यह नाटक एक संगीत कथा है। इन दोनों तत्त्वों के माध्यम से यह नाटक साम्प्रदायिकता के खिलाफ अपना सन्देश देता है। बाघ को 'विकल्प' (ऐसा समूह जो राजस्थान में बंगाली थियेटर को बढ़ावा देने के लिए सक्रिय है) द्वारा प्रस्तुत किया गया था। इसकी गतिविधि को चलाते हुए आयोजकों ने नाटक के वाचन के लिए हबीब तनवीर को आमंत्रित किया था।[74]

नाटक के बारे में लिखा गया है, *"The dramatic portion is rather dense with overlapping images and metaphors. Two women caught in communal riots take shelter in a dark house. One of them is wearing a burkha. The other is a labourer from pirpur village. They are both fleeing from the 'Bagh' whichis described as a tiger that has escaped from the circus, as a black and yellow leather jacketed motorcyclist who has been chasing the woman and awaits her beneath the window, as the goonda who raped the burkha clad woman in*

---

[73] अग्रवाल, प्रतिभा; हबीब तनवीर: एक रंग व्यक्तित्व; नाट्य शोध संस्थान, कोलकत्ता; संस्करण 1907; पृ. 75-76

[74] तिवारी, अशोक; नुक्कड़ जन्म संवाद; अंक 23-26, अप्रैल 2004 - मार्च 2005; पृ. 202

the temple where she took refuge, as the tiger of the village woman's dark memories, as the rabble rousers whoo desecrate holy places."[75]

नाटक जैसे-जैसे आगे बढ़ता है, वैसे-वैसे हम कोरस और आतंक से त्रस्त महिलओं के माध्यम से बारी-बारी साम्प्रदायिकता के एक काले परिदृश्य से अवगत होते हैं। नाटककार दो महिलाओं के व्यक्तित्वों को बारी-बारी से एक-दूसरे की अस्तित्वगत समस्याओं को साझा करते हुए आतंक के शिकार की अभिव्यक्तिपूर्ण छवि बनाता है। जब तक हममें से हर एक के द्वारा कार्यवाई नहीं की जाती है, तब तक हम साम्प्रदायिकता के इस उन्माद के अतीत, वर्तमान और भविष्य की धमकी के काले परिदृश से आहत होते रहेंगे।

वेणी संहार

भट्टनारायण की केवल एक ही रचना उपलब्ध होती है और वह है 'वेणीसंहार' नामक नाटक। यह नाटक महाभारत की एक महत्त्वपूर्ण घटना द्रौपदी के द्वारा वेणी बांधने पर आधारित है। द्रौपदी की यह गाथा घर-घर में जानी जाती है। राजसभा में सबके सामने दुशासन के चीर-हरण के कृत्य से संतप्त द्रौपदी यह प्रण करती है कि दुशासन और दुर्योधन के मारे जाने के बाद ही वह अपनी वेणी बांधेगी। इसी घटना की पूर्ति में महाभारत का पूरा कथानक यहां विन्यस्त किया गया है। उनका यह कठोर प्रण वेणी बांधने के साथ जब पूरा होता है, तो मानवता थर्रा उठती है। नाटक अनेक बड़े मानवीय प्रश्न छोड़ जाता है। युद्ध के परिणाम से उपजा क्षोभ हमसे पूछता है कि हथियारों की होड़ में मनुष्य जाति के अस्तित्व की रक्षा कैसे हो? हमारे समय में जो आंतकवाद है, युद्ध की भूमिका है उसे महाभारत की कथा द्वारा दिखाने की कोशिश की है। अब यह महाभारत की कथा ही नहीं वरन राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय स्थितियों के रेखांकन की कोशिश भी है।

---

[75] तिवारी, अशोक; नुक्कड़ जन्म संवाद; अंक 23-26, अप्रैल 2004 - मार्च 2005; पृ. 202

'वेणी संहार' रूपक में कुल छह अंक हैं। छह अंकों में महाभारत की लगभग सारी कथा कह जाना अपने आप में एक कमाल है। हबीब तनवीर ने इस नाटक को खेलने से पहले अपनी जरुरत के अनुसार इसमें काट-छांट की थी। खास तौर से सुन्दरक के संवाद को बहुत कम कर दिया था। निर्देशक जब किसी नाटक के संवाद काटकर कम कर देता है, तो उसके बहुत से कारण होते हैं। हबीब के इस नाटक में यही बात है।

महावीर अग्रवाल जी का इस नाटक के बारे में विचार है कि एक पौराणिक कथा के साथ संस्कृत और लोकमंच के तत्त्वों का सुन्दर और लचीला समन्वय हबीब तनवीर जी ने किया है। यह नाटक शांति के लिए है। निर्देशक ने प्रत्येक दृश्य बद्ध के प्रारम्भ और समापन के पश्चात् आहत कबूतर (शांतिदूत) दिखाकर नाटक को एक अर्थ विस्तार दिया तथा अपने उद्देश्य को सतत प्रतिध्वनित भी किया।

ज़हरीली हवा

'ज़हरीली हवा' नाम से भोपाल गैस त्रासदी पर आधारित राहुल वर्मा के अंग्रेजी नाटक 'भोपाल' का हिंदी में रूपांतर एवं निर्देशन हबीब साहब ने किया था। इस त्रासदी में कई हजारों लोगों की मौत हुई और असंख्य लोग आज भी इस त्रासदी से आहत है। *''ज़हरीली हवा में हिन्दुस्तान की आर्थिक, राजनैतिक पॉलिसी पर कम और विदेशी ताकतों पर हमला ज्यादा है, और ये मुनासिब भी ही इसीलिए कि भोपाल के लोग, जो यूनियन कार्बाइड की बेहिसी का खामियाजा अभी तक भुगत रहे है, उनके लिए अमरीका के वारेन एंडरसन के प्रति इंसाफ तलब करना और उन हजारों गैस-पीड़ित लोगों के लिए मुआवजा मांगना ज्यादा जरूरी है बनिस्बत इसके कि हम अपनी निंदा आप करने में लगे रहें।''*[76]

[76] तनवीर, हबीब (अनु.); ज़हरीली हवा; वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली; संस्करण 2010; पृ. 9

नाटक का कथानक एक झोपड़पट्टी में रहने वाली औरत इज्जत पर केन्द्रित है। मूल विषय तो गैस और गैस के प्रति वो लापरवाही है जिसके खतरनाक प्रभाव की जाँच कनाडा की डॉ. सोनिया लेबानते कर रही हैं। इस नाटक में डॉ. सोनिया, जो एक विदेशी फैक्टरी की लापरवाही के बुरे नतीजे मालूम करने में लगी है, के रिसर्च को कैसे दबाने की कोशिश की जाती है यह सब दिखाया गया है।

राज-रक्त

'राज-रक्त' नाटक रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा एक ही कथा पर लिखी दो कृतियों 'विसर्जन' तथा 'राजार्षि' पर आधारित है। हबीब तनवीर ने इस नाटक का मंचन 6 अगस्त 2006 को राज-रक्त के नाम से कोलकाता में किया था। छत्तीसगढ़ी गीतों के साथ ही पूर्वी बंगाल के गीतों ने नाटक में जान डाल दी थी। यह नाटक धार्मिक वृत्ति एवं धर्म निरपेक्षता के बीच शाश्वत द्वंद्व को रेखांकित करता है। साथ ही राजसत्ता और धार्मिक सत्ता के बीच टकराव की बात करता है। बकरे की बलि का दृश्य देखकर गहरे अवसाद में पहुंचे बालक की गंभीर स्थिति से द्रवित हो राजा गोविन्द माणिक्य देवी के सामने बलि देने की प्रथा पर रोक लगा देते हैं। लेकिन मंदिर का धर्मभीरु पुजारी इस पाबंदी को हटाने के लिए जी-जान लगा देता है। जबकि पुजारी के दत्तक पुत्र के लिए धर्म संकट यह है कि देवी भक्ति और राजा से वफादारी के बीच किसे चुने? वह राजा का सम्मान करता है। उसकी प्रेमिका अपर्णा भी उसे इन सारी चीजों से दूर ले जाना चाहती है। वास्तव में यह नाटक ट्रेडिशन और माइथालॉजी के माध्यम से बलिप्रथा के खिलाफ है।

अतः उपरोक्त विवेचन के आधार पर कह सकते हैं कि हबीब तनवीर बाल नाटककार के रूप में अपने लेखन की शुरुआत करते हैं। उन्होंने कुछ मौलिक नाटक लिखें तथा कुछ पाश्चात्य एवं संस्कृत नाटकों को अनुदित या रूपांतरित कर प्रस्तुत किया। लेकिन लोक शैलियों, कथाओं से संबंधित नाटक उनके सबसे सफल नाटक रहे।